दमन चक्र के पचास वर्ष

प्रीतम सिंह पंछी

दमन चक्र के पचास वर्ष

डा० शुकदेव त्रिपाठी
जी को
सुप्रेम भेंट तरफ से
सन्त गुरुदेव सिंह ६/१२/६५

दमन चक्र के पचास वर्ष

प्रीतमसिंह पंछी

प्रकाशक
श्री सत्‌गुरु प्रतापसिंह अवतार शताब्दी समिति
12, पंडित पंत मार्ग, नई दिल्ली-110001

प्रथम संस्करण : 1991
मूल्य : 60 रुपये
प्रकाशक : श्री सत्गुरु प्रतापसिंह अवतार शताब्दी समिति
12, पंडित पंत मार्ग
नई दिल्ली-110001
मुद्रक : तरुण प्रिंटर्स
शाहदरा, दिल्ली-110032

श्री सत्गुरु प्रतापसिंह अवतार
शताब्दी को समर्पित

संदेश

सत्गुरु प्रतापसिंह जी का वचन है कि आत्मा नाम सिमरन से ही बलवान हो सकती है। आत्मा बलवान होगी तो आप अपनी कौम और देश की भलाई कर सकते हैं। इसीलिए सत्गुरु जी ने प्रत्येक माता-भाई बूढ़े बालक को नाम सिमरन का उपदेश दिया। आपका वचन है कि दिन में कम से कम एक घंटा नाम सिमरन अवश्य किया जाये।

हरि नामु दिया गुर पर उपकारी।
धनु धन्न गुर का पिता माता।

सत्गुरु ही मनुष्य के भीतर के जमों की मार का भय दूर करता है:

जिनी तुधनों धन्नु कहिया,
तिन जम नेड़ि न आया।

श्री सत्गुरु प्रताप सिंह जी त्रिकाल दर्शी थे। आपको आने वाले समय में घटित होने वाली होनी का आभास था। इस संबंध में आप हमें सावधान करते रहते थे। आप यह भी जानते थे कि देश का विभाजन होने वाला है। आप कहते कि हिन्दू सिख एक हो जायें, अन्यथा खत्म हो जायेंगे।

हमें चाहिये कि हम हमेशा सत्गुरु प्रताप सिंह जी के उपदेश पर अमल करें। नाम सिमरन से अपना आत्मिक बल बढ़ायें। मनुष्य मात्र और प्राणी मात्र से प्रेम करें। ताकि सृष्टि पर रोग सोग मिट जायें। संसार में सुख ही सुख व्याप्त हो जाये।

श्री सत्गुरु प्रतापसिंह जी के जीवन की घटनाओं, आपके सदोपदेशों और जनहित के लिए किए कार्यों तथा आपके यश को साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रसारित करना एक उत्तम साधन है।

—सत्गुरु जगजीत सिंह जी

अपनी ओर से

हमारे लिए यह गौरव की बात है कि सत्गुरु प्रतापसिंह जी की पवित्र स्मृति में हम आप द्वारा जीवन क्षेत्र में किये गए महान कार्यों पर प्रकाश डालने के लिए विद्वान लेखकों द्वारा लिखित पुस्तकों का प्रकाशन कर रहे हैं।

श्री सत्गुरु प्रताप सिंह जी के नेतृत्व ने देशवासियों को आध्यात्मिक, धार्मिक, सामाजिक तथा राजनीतिक रूप से अत्याधिक प्रभावित किया और देश ने स्वतंत्रता प्राप्त की। आपका समस्त जीवन ही मानवता के कल्याण हेतु समर्पित था। सभी वर्गों के लोगों को एक मंच पर लाकर आपसी भाईचारे तथा एकता के सूत्र में पिरोने के लिए कई सम्मेलन आयोजित करवाये। गुरमति और शास्त्रीय संगीत को प्रोत्साहित किया। पशु धन की उन्नति के लिए विशेष प्रयास किये और देश विभाजन के समय उजड़ कर आये अनगिनत लोगों को पुनः बसाया।

'दमन चक्र के पचास वर्ष' पुस्तक में लेखक ने समूचे नामधारी आंदोलन का सिंहावलोकन तो किया ही है, विशेषकर उस दमन चक्र के दौर को लिया गया है, जिसमें सत्गुरु प्रतापसिंह जी अवतरित हुए थे। लेखक ने सत्गुरु प्रतापसिंह जी के महान व्यक्तित्व के सभी पक्षों को उजागर किया है।

हरविंदरसिंह हंसपाल
संसद सदस्य
12, पंडित पंत मार्ग,
नई दिल्ली-110001

दो शब्द

श्री सत्गुरु प्रतापसिंह जी वर्तमान सदी की उन महान विभूतियों में से थे, जिन्होंने विश्व-भर के लोगों के लिए जीवन मार्ग के आर्थिक और नैतिक पक्षों का नेतृत्व कर, एक विशेष संस्कृति और मर्यादा में बांधा, जिसमें एक विशेष प्रकार का संतुलन दृष्टिमान होता है। श्री सत्गुरु प्रतापसिंह जी का अवतार हिंसा की एक काली रात में श्री भैणी साहब में हुआ। आप नामधारी पंथ के अद्वितीय और सुदृढ़ धार्मिक कोख में से एक नये सूर्य की भाँति उदय हुए।

आपजी के गुरु पिता श्री सत्गुरु हरिसिंह जी तथा माता जीवन कौर जी आध्यात्मिक रूप से ऊँचे व्यक्तित्व के धनी थे ही, एक धैर्य और शीतलता की प्रतिमूर्ति जिन्होंने भारत के उद्यान में एक सुगंधि बिखेर दी, दूसरे सेवा और उपकार की वह प्रतिमा जिनकी देखरेख में श्री सत्गुरु प्रतापसिंह जी के महान व्यक्तित्व ने राष्ट्रीय जीवन में जो भूमिका अदा करनी थी, वह प्रत्यक्ष थी।

सत्गुरु प्रतापसिंह जी ने नामधारी पंथ का गुरु रूप में आधी सदी से भी अधिक समय तक नेतृत्व किया। आपकी सबसे बड़ी देन नामधारी पंथ का स्थायी रूप में संगठनात्मक विकास, कूका संग्राम और नामधारी मर्यादा को राष्ट्रीय धारा का एक अभिन्न अंग बना देना है।

गत वर्ष श्री सत्गुरु प्रतापसिंह जी शताब्दी वर्ष था। इस वर्ष के दौरान अनेक समारोह आयोजित किये गये। सबसे बड़ा योगदान सत्गुरु प्रतापसिंह जी के जीवन के सभी पक्षों को कलमबद्ध करना है, जिसके पीछे वर्तमान सत्गुरु जगजीतसिंह जी की प्रेरणा तो है ही, संसद सदस्य और श्री सत्गुरु प्रतापसिंह शताब्दी समिति के प्रधान स० हरविंदर सिंह हंसपाल का सतत् प्रयास भी सराहनीय है।

अपनी पुस्तक श्री सत्गुरु प्रतापसिंह शताब्दी पर प्रस्तुत करते हुए अत्यन्त हर्ष हो रहा है। हिन्दी भाषी जनता को इस पुस्तक से इतिहास के उस अविस्मर्णीय अध्याय की जानकारी अवश्य मिलेगी जो अब तक उनकी दृष्टि से ओझल ही रहा है।

—प्रीतमसिंह पंछी

95, रानी गार्डन,
शास्त्री नगर,
दिल्ली-31

क्रम

नयें सूर्य का उदय

महाराजा रणजीत सिंह के राज्यकाल से ही सिख नैतिक पतन का शिकार हो गये थे। इसका कारण शायद महाराजा रणजीत सिंह का निरंकुश शासन रहा हो।

धीरे-धीरे अंग्रेज शासकों के पैर भारत की सर जमीन पर जमने लगे थे। 1857 के गदर ने उन्हें चेता दिया था। भले ही यह गदर असफल रहा था, मगर पीछे अपने बीज छोड़ गया था और अंग्रेज शासक भी चौकस हो गये थे। उन्होंने अपना दमन चक्र तेज कर दिया था। देश में कहीं भी अंग्रेज के विरुद्ध कोई आवाज उठती थी तो उसे फैलने से पहले ही कुचल दिया जाता था।

ऐसी परिस्थितियों में एक नये सूर्य का उदय सत्गुरु रामसिंह जी (अवतार 1816 ई० गांव राईयां, जिला लुधियाना) के रूप में हुआ। वह जवानी में खालसा फौज में भरती हो गये थे। उसी समय आपने अनुभव किया था कि फौज का एक प्रभाव शाली गिरोह अंग्रेज के साथ सौदेबाजी करने में संलग्न था। उन्हीं दिनों खालसा फौज की एक टुकड़ी को हजरों (तत्कालीन सीमा प्रान्त) जाने का अवसर मिला। इस टुकड़ी में सत्गुरु रामसिंह जी भी शामिल थे। आप सत्गुरु बालक रामसिंह जी के दर्शन को गये। सत्गुरु बालक सिंह जी ने गुरुदीक्षा देकर सत्गुरु रामसिंह जी को गुरुगद्दी का दायित्व दे दिया।

सत्गुरु रामसिंह जी की दिव्य दृष्टि ने समय की नज़ाकत को भली भांति समझा और खालसा सेना की नौकरी को छोड़कर अपने गांव भैणी साहब जिला लुधियाना आ गये। जहां आकर आपने कई वर्ष घोर तपस्या की और कूका आंदोलन की रूप रेखा तैयार की। पंजाब पर उस समय अंग्रेज पूरी तरह से अधिकार जमा चुके थे।

1857 ई० बैसाखी का दिन था। सत्गुरु रामसिंह जी ने पांच सिक्खों को

अमृतपान करवा कर संत खालसा की स्थापना की। समाप्त हो रही सिक्खों की धार्मिक मर्यादा और भावना को पुनः जीवित किया। तत्पश्चात दस वर्ष के अल्पकाल में सात लाख नामधारी एक शक्ति के रूप में उभर कर सामने आ गये। विदेशी शासक सत्गुरु रामसिंह जी की अदभुत संगठन क्षमता को देखकर भयभीत हो गये। इसके पूर्व कि उन पर अंग्रेज का दमन चक्र चलता, उन्होंने तत्कालीन पंजाब के जिलों के लिए 22 सूबों (प्रचार प्रमुख) नियुक्त कर दिये जो सत्गुरु रामसिंह जी के मिशन का हर प्रकार से प्रतिनिधित्व करते थे।

कूका आंदोलन के प्रारम्भिक दौर में श्री आदि ग्रन्थ की हस्त लिखित बीड़ों (प्रतियां) जिन्हें सत्ता के नशे में भूल चुके थे और वह दीमक का शिकार हो रही थीं। बाहर निकलवाया तथा आदर सहित 'प्रकाश' करवाया। अमृत पान की लहर चलायी। मांस, शराब, अफीम, भांग और पोस्त के नशे जो बहुत बढ़ चुके थे, लोग उनका परित्याग करके सद्मार्ग पर आने लगे। मस्ती के आवेश में कूकने के कारण संत खालसा को 'कूका' कहा जाने लगा। और यह आन्दोलन कूका आन्दोलन के नाम से इतिहास में प्रसिद्ध हुआ।

विदेशी शासकों की भारत पर मजबूत पकड़ को देखते हुए प्रत्येक भारतीय चिंतित था और उसके भीतर देश भक्ति की भावना किसी न किसी रूप में प्रस्फुटित होने लगी थी। नैतिक और धार्मिक पक्ष की मजबूती के बाद कूका आन्दोलन राजनीति की ओर अग्रसर हुआ। नामधारी सिखों को कश्मीर की रियासत के सैन्य प्रशिक्षण के लिए भेजा गया और वहीं पर कूका रजमेंट की स्थापना भी हुई। अंग्रेज राज्य की मान्यता को ठुकरा दिया गया। डाक व्यवस्था अपनी जारी की गयी। सत्गुरु रामसिंह जी ने आदेश जारी किया—

1. कोई भी पंजाबी विलायत की बनी हुई किसी भी वस्तु का प्रयोग न करे।
2. सभी पंजाबी अंग्रेजों की डाक-व्यवस्था का बहिस्कार करें।
3. अंग्रेजी भाषी सरकारी स्कूलों में कोई शिक्षा ग्रहण न की जाये।
4. अंग्रेजों की अदालतों में मुकदमा लेकर न जाये वरन् गांवों में अपने संगठनों के द्वारा आपसी विवाद निपटाये जायें।
5. प्रत्येक सिख अपना गड़वा डोरी (लोटा-रस्सी) रखे और अंग्रेज भक्तों के साथ किसी प्रकार का तालमेल न रखा जाये। गाय और गरीब की रक्षा के लिए हर संभव प्रयास किया जाये।

राजनीतिक गतिविधियाँ, समाज सुधार तथा आनन्द मर्यादा (विवाह रस्म) प्रारम्भ करने के कारण सत्गुरु रामसिंह जी को उनके अपने ही गांव भैणी

साहब में नजरबन्द कर दिया गया। सत्गुरु रामसिंह जी ने नजरबंदी के दौरान भी अपने द्वारा नियुक्त सूबों के द्वारा प्रचार कार्य जारी रखा।

ईसाई मिशन और चर्च स्कूल व बोर्डिंग आदि पंजाब में सत्गुरु रामसिंह जी द्वारा कूका आन्दोलन प्रारम्भ करने (1857) से पूर्व स्थापित हो चुके थे और उनका प्रभाव बढ़ता देख कर आपने सरकारी संरक्षण वाले इन मिशनों और चर्च के अंग्रेजी स्कूलों के बहिस्कार का नारा दिया। आपने अनुभव कर लिया था कि इन मिशनों और स्कूलों द्वारा ही अंग्रेज पराधीनता की भावना को भारत की जनता के दिल में बैठाने की कोशिश में सफल हो रहे हैं। इन परिस्थितियों में जबकि आपका लक्ष्य अंग्रेजी राज्य को जड़मूल से उखाड़ना था यह आवश्यक हो गया था कि अंग्रेजों की शिक्षा प्रणाली का बहिस्कार किया जाये।

आगे चलकर महात्मा गांधी ने कहा था कि अंग्रेजी की शिक्षा लेना उनके लिए पराधीनता की बेड़ियों को पक्का करना है। स्कूल कालेजों में शिक्षा की जो बुनियाद डाली गयी थी, वह भारतीयों के लिए दासता का चिह्न था। गांधी जी ने यहां तक कहा था कि उनका यह दृढ़ निश्चय है कि सरकारी स्कूलों का परित्याग करने वालों ने अपनी और देश की भलाई ही की है। गांधी जी की इस विचार धारा का मूल स्रोत गुरु रामसिंह जी का स्वाधीनता आंदोलन ही था।

सत्गुरु रामसिंह जी ने आदेश दिया :

1. महिलाओं को भी खण्डे का अमृत पान करवाया जाये और पुरुषों के समान दर्जा दिया जाये।
2. विधवाओं के पुनर्विवाह हों। पैदा होते ही लड़कियों को मारना, उन्हें बदले में देना और बेचना बंद किया जाये।

उस समय सिखों के विवाह भी ब्राह्मण पुरोहित करवाया करते थे और उन्होंने लोगों को रूढ़िवादी रस्मों में बुरी तरह से जकड़ रखा था। सत्गुरु राम-सिंह जी ने 1863 ई० को खोटे नाम के ग्राम जिला फिरोजपुर में एक समारोह आयोजित किया और वहां पर विवाह की नई सरल रीति प्रचलित की। प्रथक जातियों के छ: जोड़ों के आनंद (विवाह) किये, जिनमें सनातन मर्यादानुसार हवन किया। वेदी बनाई लेकिन हवन में वेद मंत्रों के स्थान पर आदि ग्रन्थ की (लावां) नाम की वाणी की चार लावें पढ़ाकर वेदी के अन्दर दायें से बायें हवन कुण्ड के गिर्द चार फेरों के साथ विवाह की रस्म पूर्ण की। बाद में 1909 ई० सत्गुरु प्रतापसिंह जी ने आनन्द मैरिज एक्ट पास करवाने में सहयोग देकर

आनन्द मर्यादा (सिख विवाह) को कानूनी मान्यता दिलवाई।

गतिशील कूका संगठनों ने समस्त पंजाब को कूका रंग में रंग दिया। यह अन्दोलन इतना व्यापक था कि उसने जीवन के हरेक क्षेत्र में अपना प्रभाव दिखाना शुरू किया। अंग्रेज शासकों ने आंदोलन को कमजोर करने की हर कुचाल चली। रियासतों के शासकों को विशेष निर्देश दिये गये। महाराजा रणजीत सिंह के शासन काल में पंजाब में गो-वध पर लगा हुआ प्रतिबंध हटा कर स्थान-स्थान पर बूचड़ खाने खुलवा दिये। कूके सिख बूचड़ खाने खुलने पर भड़क उठे। उन्होंने सन् 1871 ई० तक तीन स्थानों अमृतसर, रायकोट और मलेर कोटला में गो-घातक बूचड़खानों पर आक्रमण करके बहुत से बूचड़ों को सजा दी। विदेशी सरकार ने कानून व व्यवस्था का बहाना बनाकर सत्गुरु रामसिंह जी तथा उनके प्रमुख सूबों को गिरफ्तार करके पंजाब से बाहर अलग-अलग स्थानों में नजरबंद कर दिया। सत्गुरु रामसिंह जी को रंगून (बर्मा) में नजर बंद किया गया। अधिकांश कूका नेताओं को उनके गांवों में नजर बंद कर दिया गया। अनेक वीर कूकों को तोपों के सामने खड़ा करके उड़ा दिया गया। कई फांसी पर लटका दिये गये तथा काला पानी (अण्डमान) भेजे गये। श्री भैणी साहब में स्थायी रूप से पुलिस चौकी बैठा दी गयी।

भारत में असहयोग आंदोलन और स्वदेशी आंदोलन को बहुत से लोग महात्मा गांधी की देन समझते हैं लेकिन पंजाब के शौर्य पूर्ण इतिहास के पृष्ठ इस सच्चाई के साक्षी हैं कि भारत में स्वदेशी और असहयोग आंदोलन के प्रथम प्रणेता सत्गुरु रामसिंह जी ही हैं।

सत्गुरु रामसिंह जी ने उस महान लक्ष्य को भलीभांति अपने हृदय मंदिर में स्थान दिया था कि नैतिक पतन ही किसी राष्ट्र की गिरावट का मूल कारण होता है। भौतिक दृष्टि से समृद्ध राष्ट्र भी जब अपनी नैतिक मान्यताओं को तिलांजलि दे देता है तो उसका पतन सुनिश्चित हो जाता है। इतिहास साक्षी है कि यूनान की महान सभ्यता का पराभव और उस साम्राज्य की विध्वंस लीला का प्रारम्भ भी उसमें नैतिक पतन आ जाने के फलस्वरूप ही हुआ था।

तत्कालीन परिस्थितियों ने सत्गुरु रामसिंह जी को कर्तव्य पथ पर अग्रसर होने की प्रेरणा दी। स्वतन्त्रता संग्राम का यह महान पथ प्रदर्शक स्वातंत्र्य लक्ष्मी की मंगल मूर्ति को अपने हृदयासन पर आसीन कर सर्व प्रथम अपने स्वजनों को ही सत्य पथ पर लाने के सद्कर्म में प्रवृत हो गया।

इस महामानव ने अपने अनुयायियों को अपना नैतिक स्तर ऊंचा उठाने, तन और मन को शुद्ध करने हेतु सात्विक आहार करने तथा मांस और मदिरा सरीखी वासनात्पादक चीजों से परहेज करने, प्रति दिन स्नान से निवृत होकर परमपिता परमात्मा का ध्यान करने और नैतिक बल बढ़ाने का सदुपदेश दिया।

भैणी साहब एक नजरबंदी कैम्प

अमृतसर, रायकोट, मलेर कोटला में बूचड़ों के साथ संघर्ष का वहाना वनाकर अंग्रेज सरकार ने सत्गुरु रामसिंह जी तथा उनके ग्यारह सूबों (प्रचार प्रमुख) को पंजाव से निर्वासित करके अलग-अलग स्थानों पर भेज दिया गया। सत्गुरु जी को वर्मा में नजर वंद कर दिया। कई प्रम्मुख कूको को जेलों में ठूंस दिया गया। कूकों के प्रमुख केन्द्रों में पुलिस-चौकी वैठा दी गयी।

भैणी साहव की तलाशी ली गयी तो उसमें 36 कुल्हाड़ी, 2 खोखरी और कुछ लाठियां मिलीं। बस, यही था कूको का शास्त्रागार, जिसकी तलाश में अंग्रेज सरकार ने भैणी साहब डेरे के इंच-इंच स्थान को खुदवा डाला था। भैणी साहब डेरे में रहने वालों की संख्या 173 थी। डेरे में गाय, भैंसें, ऊंट, घोड़े आदि 82 पशु भी थे। इन पशुओं कों सम्भाल के लिए ग्यारह व्यक्तिों को भैणी साहव में रहने की अनुमति दे दी गयी।

सत्गुरु रामसिंह जी के पिता बाबा जस्सा सिंह, छोटे भाई बुधसिंह (जो वाद में गुरु हरिसिंह जी के नाम से विश्वविख्यात हुए) तथा गुरु रामसिंह जी की लड़की बीबी नंदा के परिवार की देख-रेख के लिए 3 पुरुष तथा 2 स्त्रीयों को रहने की अनुमति दी गयी। बाकी सब को पैदल लुधियाना चलने का आदेश दिया गया। सर्दी में वह भूखे प्यासे 20 मील का सफर तय करके लुधियाना पहुंचे। डिप्टी कमिशनर लुधियाना ने उन्हें कोई विद्रोही हरकत न करने की चेतावनी देकर अपने-अपने घरों को भेज दिया।

सत्गुरु रामसिंह जी का वह डेरा (मुख्यालय) जहां से देश की स्वतंत्रता के लिए एक कूक उठी थी (इसी कारण आपके अनुयाई कूके कहलाये) अव एक जेल खाना सा बन गया था। पंजाब के लेफटीनेंट गवर्नर ने एक पत्र द्वारा जिला अधिकारियों को आदेश दिये थे कि जहां भी पांच से अधिक कूके जमा हों, उनके

विरुद्ध कड़ी कार्रवाई की जाये।

पंजाब के सभी सिख सरदारों महंतों राजा महाराजाओं ने सरकार के इस दमन चक्र का पूरी तरह से समर्थन किया। उन्होंने अपने राज्यों में भी कूकों पर दमन चक्र चलाना शुरू किया।

महाराजा महेन्द्र सिंह (पटियाला) ने 20 जनवरी, 1872 के अपने एक पत्र में अपने राज्य में रह रहे कूकों पर सख्ती करने और उनकी सम्पति जब्त करने का आदेश दिया।

इसी प्रकार मई, 1872 में जालंधर के, 28 जून, 1872 को करनाल, जगाधरी, बिलासपुर, मुस्तफावाद, वूरिया, तथा अम्बाला जिला के नवाबों, शाहूकारों, नगरपालिका के 147 सदस्यों ने सरकारी कार्रवाई की पुष्टि की।

जिला होशियारपुर के 140 प्रतिष्ठित व्यक्ति सरकार भक्ति का प्रमाण देने के लिए जमा हुए। भला आनंदपुर के सोढ़ी बेदी पीछे कैसे रह जाते? उन्होंने भी सरकार परस्त होने का सबूत दिया।

संगरुर के महाराजा रघुवीर सिंह ने भी अपने क्षेत्र के नामधारी सिखों को गुरु रामसिंह का साथ छोड़ देने का आदेश सुना दिया। अपनी बात मनवाने के लिए वदोमली के सरदार साहब सिंह और उनकी पत्नी को जेल में बंद कर दिया गया तथा उनकी 120 एकड़ भूमि जब्त कर ली।

महाराजा फरीदकोट तो कूकों को यमराज होकर मिला। उसने कूकों को पीटा, वृक्षों पर उलटा लटकाया और भांति-भांति की यंत्रणाएं दीं।

तत्कालीन समाचार पत्रों 'दी इंग्लिश मैन' 'दी हिन्दू पेट्रियाट' 'इन्डियन स्टेटसमैन' 'दी फ्रैन्ड आफ इन्डिया' का रवैया भी कूकों के प्रति सहानुभूति पूर्ण नहीं था।

यदि कूकों के साथ सहानुभूति रखने वाला कोई सिपाही दिखाई दिया तो उसे तत्काल नौकरी से निकाल दिया गया।

भैणी साहब गुरुद्वारा की ड्योढ़ी के आगे जो पुलिस चौकी बैठाई गयी थी, उसमें दस सिपाही और एक सार्जेन्ट तैनात किये गये थे। वे सभी कट्टर और जनूनी मुसलमान होते थे। पहले तो वहां के निवासियों के वगैर किसी को गुरुद्वारे के अंदर जाने नहीं दिया जाता था। कुछ वर्षों पश्चात ढील दे दी गयी। फिर भी एक दिन में केवल दस दर्शनार्थियों को ही गुरुद्वारे के अंदर नाम पता लिखकर जाने दिया जाता। इस प्रतिबंध के कारण भैंणी साहब गांव नामधारी जत्थों का जमाव लगा ही रहता। कई जत्थों को सात-सात दिन तक अपनी बारी की प्रतीक्षा करनी पड़ती थी। गुरुद्वारा के अंदर जाने से पूर्व उनका नाम व पता अवश्य

लिखा जाता था। वे भूखे-प्यासे रहकर वाहर रेत के टीलों में कीर्तन करते हुये अपना समय व्यतीत कर लेते थे। गुरुद्वारे के भीतर लंगर (सामूहिक भोजन) तो उस समय से निरंतर चलता आ रहा था, जब से सत्गुरु रामसिंह जी ने लंगर की लौह अपने शुभ कर कमलों से स्थापित की थी। लंगर की सेवा करने वाले सेवादार चौकी के सिपाहियों की आंख बचाकर टोकरों में लंगर भर कर वाहर भूखे प्यासे नामधारियों तक पहुंचाते थे।

गुरु हरिसिंह जी (गुरु रामसिंह जी के अनुज बुधसिंह जी) अब कूका आन्दोलन को चलाने लगे। सत्गुरु रामसिंह जी देश से निर्वासित होते समय तक तथा बाद में बर्मा में अपने दर्शनार्थ गये नामधारियों के द्वारा भेजे अपने हुक्मनामों में अपने भाई बुधसिंह जी को कहा था कि अब से यह हरिसिंह कहलायेंगे जो सिखी हरी भरी भरी रखेंगे।

धीरे-धीरे जैसे परिस्थितियां बदलती गयीं, सत्गुरु हरिसिंह जी का वाहरी दुनिया से सम्पर्क बढ़ने लगा। पहले तो पता ही नहीं चला कि सत्गुरु रामसिंह जी तथा सूबों को कहां पर लेजाकर रखा गया है। मगर भाग दौड़ और प्रयास के बाद किला रायपुर (जिला लुधियाना) के प्रमुख नामधारी स० दरवारा सिंह ने आखिर सत्गुरु रामसिंह जी का पता निकाल ही लिया।

सवसे पहले दरबारा सिंह रंगून गये और सत्गुरु रामसिंह जी के साथ सम्पर्क करने में सफल हो गये। वह सत्गुरु हरिसिंह जी के नाम एक हुक्मनामा लेते आये। फिर तो भैणी साहव और रंगून के बीच आने वालों का तांता ही ही लग गया। बहुत से नामधारी सिख गिरफ्तार भी हुये, मगर नामधारियों ने साहस नहीं छोड़ा। वे अनेक तरह के कष्ट झेलते हुये भी अपने गुरुदेव के दर्शनों को रंगून जाते रहे।

विदेशों में कूका गतिविधियां

अंग्रेज सरकार द्वारा भैणी साहब को एक नजर बंदी कैम्प में परिवर्तित कर देने के बाद सत्गुरु रामसिंह जी के भाई गुरु हरि सिंह जी ने विदेशों, विशेषकर रूस में कूका गतिविधियां तेज कर दी थीं। इन गतिविधियों में सूबा बिशन सिंह तथा गुरचरन सिंह की प्रमुख भूमिका रही।

गुरु हरिसिंह के समय के इन शूरवीर कूकों से पूर्व भी सत्गुरु रामसिंह जी के समय कुछ देशों के साथ कूका केन्द्र भैणी साहब के साथ सम्पर्क सूत्र जुड़ चुके थे। उनका उलेख करना यहां आवश्यक है।

कशमीर में कूका रेजीमेण्ट

महाहाजा कश्मीर का गुरु वेदांती था। वह भी बृटिश सरकार की कुटल नीतियों के सम्बन्ध में चौकस रहता था। वह अंग्रेजों के अनावश्यक हस्तक्षेप के सख्त खिलाफ था। इसी लिए उसने रूस और नेपाल के साथ सम्वंध बढ़ाने की शुरूआत की।

गुजरां वाला और स्यालकोट के नामधारियों की इस वेदांतीं के साथ दोस्ती थी। सत्गुरु रामसिंह जी ने ग्रन्थगढ़ के किशन सिंह को कश्मीर के महाराज के साथ दोस्ती करने के लिए भेजा। वेदांती ने उसे महाराजा रणवीर सिंह के साथ मिला दिया। किशन सिंह ने महाराजा को कूका आंदोलन की राजनीति, सामाजिक, धार्मिक तथा अन्य गतिविधियों के सम्वंध में विस्तार सहित बताया। उसने महाराजा को नामधारी सिखों की ओर से हर प्रकार की सहायता देने का आश्वासन भी दिया।

सन् 1869 ई० की गर्मी के मौसम में गुरु रामसिंह जी गुजरां वाला और स्यालकोट जिलों का दौरा कर रहे थे। आपने हीरासिंह सढ़ौरे वाला और तारा सिंह किला देसासिंह के साथ लगभग तीस सिख कश्मीर में महाराजा के पास भेजे। उन्होंने महाराजा की सेना में भरती होने का इरादा प्रकट किया। वेदांती से संपर्क करके महाराजा रणबीर सिंह ने उन्हें जम्मू के बाहर रहने के लिए जगह दे दी। सभी कूके सिख लम्बे-चौड़े जवान थे और अंग्रेजी शासन की विरोधी एक संस्था के सदस्य थे। उन्हें सेना में भरती कर लिया गया।

कुछ दिनों के बाद महाराजा ने हीरासिंह से कहा कि वह कुछ और कूकों को भरती कराये। और कूकों की एक पूरी रजमेन्ट तैयार कर ली जाये।

हीरासिंह सत्गुरु रामसिंह जी की अनुमति से 150 जवान कूकों को लेकर कश्मीर लौटा। महाराजा ने सब को भरती कर लिया। डोगरा सिपाहियों से

उन्हें वेतन अधिक दिया गया। हीरासिंह इनका कमाण्डर था। और इस रजमेन्ट को सीमान्त क्षेत्रों में तैनात किया गया।

तत्पश्चात और कूके भी आते गये और भरती होते गये। इन कूका सिपाहियों की संख्या 200 तक पहुंच गयी। दीवान कृपाराम कश्मीर के महाराजा का प्रधान मंत्री तो था ही, मगर अंग्रेज सरकार का भी पक्का वफादार था। वह कूका रैंजिमेन्ट के सम्वंध में अंग्रेज सरकार को सूचित करता रहता था। पंजाव सरकार को जव कूकों के कश्मीर की सेना में भरती होने का पता चला तो इंस्पेक्टर जनरल पुलिस ने नवम्वर, 1869 ई० में एक डिप्टी इंस्पेक्टर को जांच के लिए भेजा। उसने फरवरी, 1870 में वापस आकर सरकार को रिपोर्ट दी कि इस समय कश्मीर की कूका रैंजिमेन्ट में 150 सिपाही हैं।

दीवान कृपाराम महाराजा के कान भरने लगा कि नामधारी (कूके) पक्के सिख नहीं हैं। अंग्रेज उन्हें अच्छा नहीं समझते। मगर वेदांती के कूका समर्थक होने के कारण उसकी एक न चली!

1871 ई० में कूकों की गो-रक्षा गतिविधियों ने स्थिति को पलट दिया। दीवान ने महाराजा रणवीर सिंह के फिर कान भरने शुरू किये कि अंग्रेज रैंजिमेन्ट कूकों को अपना शत्रु समझते हैं। अगर रियासत कूकों को गले लगायेगी तो अंग्रेज सरकार इसे एक तरह का खुला विद्रोध समझेगी।

महाराजा भयभीत हुआ और उसने 1871 ई० में कूका रैंजिमेन्ट को भंग कर दिया।

नेपाल के साथ संपर्क

नेपाल, भारत के उत्तर-पूर्व में, पहाड़ी क्षेत्र में फैला हुआ एक हिन्दू राज्य है। 1760 में महाराजा पृथ्वी नारायण शाह ने इर्द-गिर्द के छोटे-छोटे पहाड़ी रजवाड़ों को जीत कर इस राज्य की स्थापना की थी। इसकी राजधानी काठ-माण्डू बनाई गयी।

नेपाल नरेश को अंग्रेजों का भारत में फैलते जाना अखरता था। वह चाहता था कि भारतीय रियासतों के शासकों की सहायता लेकर अंग्रेज को भारत से खदेड़ा जाये।

जंग बहादुर 1847 में प्रधान मंत्री बना। वह अंग्रेज शासकों की कुटलनीति को समझता था। जब अंग्रेजों ने सिख राज्य को निगल लिया तो उसके दिल को भारी चोट लगी। वह राज्य का वफादार अधिकारी था। अब भी उसे राज घराने के साथ पूर्ण सहानुभूति थी। उसने चुनार के किले से निकल भागी महारानी जिंदां को अपने राज्य में शरण दी और उसे पूरे शाही सम्मान के साथ नेपाल में रखा था।

1857 ई० में जंग बहादुर के नेतृत्व में ही नेपालियों ने तिब्बतियों को करारी हार दी और उनके साथ सख्त शर्तों के साथ समझौता किया। एक शर्त यह भी रखी गयी कि लाहौर दरबार के सभी सिख कैदी नेपाल को सौंप दिये जायें। यह सभी कैदी, सैनिक थे। उन्हें नेपाली सेना को पहाड़ी और मैदानी क्षेत्रों में युद्ध करने की सिखलाई के लिये तैनात किया गया।

1857 ई० को, आजादी के प्रथम संग्राम के कई योद्धा पराजित हो जाने के कारण अपने बचाव के लिए नेपाल चले गये। नेपाल में उनका हार्दिक स्वागत किया गया। अंग्रेजों ने उन्हें वापस करने के लिए दबाव डाला मगर उसने एक न सुनी। वह अंग्रेज रेजिडेन्ट को नाराज भी न करता और सतर्क भी रहता।

कूका किशन सिंह, उपनाम हरिसिंह जिसने कश्मीर में कूका रजमेंट कायम करने में सहायता की थी। अंग्रेज सरकार की आँख की किरकरी वना हुआ था। उसे अंग्रेज सरकार ने एक कत्ल के केस में फंसाना चाहा मगर वह भागकर नेपाल जा पहुंचा।

1868 को उसका संपर्क एक पंजाबी हवलदार नंदराम के साथ हुआ। होते-होते उसकी पहुंच प्रधान मंत्री तक हो गयी। किशनसिंह ने उसे कूका आन्दोलन के सम्बन्ध में जानकारी दी और कूका आंदोलन के राजनीतिक कार्यक्रमों के बारे में वताया। जंगवहादुर यह सब कुछ सुनकर बहुत प्रभावित हुआ और सत्गुरु रामसिंह से मिलने की इच्छा प्रकट की। किशनसिंह ने सत्गुरु रामसिंह जी को संदेश भिजवाया। सत्गुरू जी स्वयं तो पंजाब के बाहर जाना नहीं चाहते थे। कूका आन्दोलन के विदेशों के साथ सबंन्धों को वह गुप्त रखना चाहते थे। आपने 1871 ई० में सूवा साहिबसिंह और बावा कान्हसिंह निहंग को अपने दूत के रूप में नेपाल में भेजा। उन्होंने प्रधान मंत्री से मिलकर अपने सत्गुरू और कूका आंन्दोलन का प्रतिनिधित्व किया। जब यह लोग दूत के रूप में दो बढ़िया भैंसे, दो खच्चर उपहार स्वरूप लेकर नेपाल में पहुंचे तो उनका शाही स्वागत किया गया।

नेपाल सरकार के अधिकारी कृपालसिंह ने आपको प्रधानमंत्री के सुपुत्र बब्बर जंग के साथ मिलाया। तत्पश्चात वे जंग बहादुर से भी मिले। जंग बहादूर और बाबा कान्हसिंह निहंग दोनों लाहौर दरबार के बफादार नौकर रह चुके थे। बड़े स्नेह प्यार से मिले।

कुछ दिन शाही अतिथि रहने के पश्चात दोनों सूबों ने जाने की अनुमति चाही। जंगबहादुर ने कसतूरी के 108 मनको की माला, जिसका फूल सोने का था, एक तिब्बिती घोड़ा, दो रत्न जड़ित खोखरियाँ, एक बहुमूल्य दोशाला, बनात के कपड़े का 50 गज का थान और 500 रु० नकद देकर उन्हें विदाई दी।

सत्गुरू रामसिंह का अपने सूबों को नेपाल भेजना आपकी राजनीतिक सूझ-बूझ और दूरंदेशी का एक जीता जागता प्रमाण था।

जब सरकार को यह रिपोर्ट मिली, तो उसने नेपाल राज पर अपनी-चौकसी बढ़ा दी। अंग्रेज सरकार को खुश करने के लिए नेपाल दरबार कूकों की दोस्ती से अपना हाथ पीछे खींच लिया। जनरल बब्बर जंग ने कुकों को तोपों से उड़ाने के समय अपनी ओर से सहायता की पेशकश की थी।

अफगानितान के साथ संबंध

भारत के उत्तर-पश्चिम में एक महत्वपूर्ण देश अफगानिस्तान है। वहां का शासक दोस्त मुहम्मद 1863 ई० तक गद्दी पर बना रहा और अंग्रेजों के साथ दोस्ती भी बनाये रखी।

दोस्त मुदम्मद की मृत्यु के पश्चात उसका बेटा शेरअली गद्दी पर बैठा। वह अंग्रेजों से घृणा करता था। उसने रूस के साथ अपने सम्वन्धों को वढ़ाया और अंग्रेज विरोधी कूकों के साथ भी ताल-मेल पैदा किया। अफगानिस्तान के साथ ताल मेल वढ़ाने में सवसे अधिक योगदान कूका विशनसिंह का था, जिनके सम्वन्ध में विस्तार पूर्वक उल्लेख अगले पन्नों में किया गया है।

रूस के साथ संपर्क

हजरों डेरे का महन्त, भारत और रूस के बीच सम्पर्क स्थापित करने में गुरू हरिसिंह की भरसक सहायता किया करता था। एक बार बावा गुरबचन सिंह ने काबुल होते हुये रूस जाने की योजना बनायी। जब वह हजरों (सीमा प्रान्त) पहुंचे तो वहाँ से भाई कान्हसिंह ने उन्हें यह कहकर वापस लौटा दिया कि पेशावर और कावूल के बीच का मार्ग सुरक्षित नहीं है।

बाबा गुरचरनसिंह खालसा फौज में रह चुके थे और उनका यह संकल्प था कि भारत से अंग्रेजी राज की जड़ें उखाड़ फेंकी जायें। एक ब्रिटिश सरकारी रिपोर्ट में कहा गया था :

गुरचरन सिंह निश्चय ही अंग्रेज सरकार का शत्रु है। यद्यपि वह 75 वर्ष का एक बूढ़ा व्यक्ति है, अगर फिर भी वह शारीरिक तौर पर बड़ा शक्तिशाली है और बड़ी-बड़ी विपदाओं को झेलने का साहस रखता है। वह एक संत सिपाही का श्रेष्ठ नमूना है। मानसिक तौर पर बड़ा जागरूक और चौकस है। अगर उसे आजाद रहने दिया गया तो वह रूसियों की सहायता से पंजाब पर कूकों का कब्जा करने के आवसर को नहीं खोयेगा।

बाबा गुरचरनसिंह रूसिथों तथा नामधारी केन्द्रो के बीच संपर्क की मुख्य कड़ी थी।

इन रिपोर्ट से यह स्पष्ट था कि अंग्रेज सरकार रूस और नामधारी सिखों के बीच संपर्क सूत्रों को अपने लिए बेहद हात्तिकारक समझती थी।

तत्पश्चात् पंजाब सरकार ने सूबा गुरचरनसिंह को 1818 के रेगूलेशन के अधीन मई, 1881 को गिरफ्तार करके नजरबंद कर दिया। पंजाब के लेफ्टीनेंट गवर्नर का आरोप था कि गुरचरन सिंह रूसियों तथा बर्मा में नजरबन्द गुरु रामसिंह के बीच संदेशों का आदान प्रदान करता है। बाबा गुरुचरन सिंह को

शाही कैदी के रूप में मुलतान जेल में रखा गया था।

मार्च, 1883 को पंजाब सरकार ने सूबा गुरचरनसिंह को पुलिस संरक्षण में कुछ शर्तं के साथ केवल मुलतान में ही रहने की अनुमति दे दी। बावा गुरचरन सिंह से 1000 रु० की जमानत भी मांग ली गयी। उन्हें यह भी कहा गया कि वे मूलतान पुलिस की निगरानी में रहेंगे।

7 सितम्बर,1886 को सूबा गुरचरन सिंह को इन पाबंदियों से भी मुक्त कर दिया लेकिन नामधारी केन्द्र मैणी साहब जाने की उसे अनुमति नहीं थी।

सूबा विशन सिंह : एक और संपर्क कड़ी

अप्रेल, 1880 को लुधियाना जिला पुलिस कप्तान ने रिपोर्ट दी थी :

"वर्तमान समय भी कूके उत्तेजना की स्थिति में है और उनके बीच निरंतर सलाह मश्विरे चलते रहते हैं। बाबा बुधसिंह आफ भैणी (कूका हरिसिंह) को मिलने दूर-दूर से लोग आते हैं। एक धनी मानी-व्यक्ति विशनसिंह अरोड़ा है। जिसकी पेशावर, काबुल और बुखारा में व्यापारिक एजंसियां हैं। रूसियों तथा बुधसिंह के बीच एक संपर्क कड़ी है। रूसी दूत वेष बदलकर बुधसिंह के एजंटों से किशनसिंह की सहायता से मिलते हैं।"

जून, 1880 में उपरोक्त अधिकारियों ने रिपोर्ट दी-कि समुन्दरसिंह नंबरदार (छज्जेवाल) और कान्हसिंह कमालपुर ने बताया कि विशनसिंह छ: मास पूर्व बुद्धसिंह से मिला था और उन्हें एक बहुमूल्य पोषाक दी थी। जो गुरु रामसिंह सिंह को भेज दी। कहा जाता है, विशनसिंह हजरों के बालकसिंह से दीक्षा लेकर कूका समुदाय में शामिल हुआ था।

अगस्त, 1880 में फिरोज़पुर के जिला पुलिस कप्तान ने रिपोर्ट दी : "यह आम कहा जाता है कि कूका पंथ के लोगों में यह धारणा आम हैं कि अब समय आ गया है जब कि रूसियों को काबुल के मार्ग से भारत पर आक्रमण कर देना चाहिए।

वे कहते हैं कि जब गुरु रामसिंह को गिरफ्तार किया गया था तो बिशनसिंह नाम के व्यक्ति को तुर्कस्तान के मार्ग से रूस भेजा गया था। ताकि वह कूकों के उद्देश्य की पैरवी कर सके।

28 अगस्त, 1880 को, लुधियाना के ज़िला पुलिस कप्तान ने रिपोर्ट दी है कि धूलकोट जिला फिरोजपुर के जोगासिंह ने बताया है कि वह 12 बर्ष पूर्व हजरो में गुरु रामसिंह के साथ था जहां वह विशनसिंह से मिले। उसने बताया कि

वह काबुल में रहता है और सरदारों का विश्वाश पात्र हैं जिन्होंने उसे भारत के सम्बन्ध में सूचनाएं देने के लिए नौकर रक्खा हुआ है। उसने बताया कि वह इस समय पेशावर में रहता है। जोगासिंह, उससे आनन्दपुर जिला होशियारपुर के होला मेला में भी मिला था। उसने कहा कि हरिपुर (सिरसा) वड़तीर्थ तालाव से एक साखी (भविष्य कथा) मिली है, जिसमें भविष्य वाणी की गयी है कि सीमा प्रान्त के पार से विशनसिंह के नेतृत्व में एक मुस्लिम सेना पंजाब की तरफ मार्च करेगी। रूसियों के साथ उसका ताल मेल है। उसके साथ बारह और कूके भी हैं जो 1872 को मलेर कोटला काण्ड से बच निकले थे। और रूस की सीमा में घुस गये थे।

अक्तूबर, 1880 में लाहौर के जिला पुलिस कप्तान ने रिपोर्ट दी कि विशन-सिंह को चक्र रामदास जिला स्याल कोट के महन्त गुरचरनसिंह की तरफ से सूवा (पंथ का का प्रतिनिधि और प्रचार प्रमुख) नियुक्त किया गया है, और वे एक साथ बुखारा जाने की तैयारी कर रहे हैं। गुरचरनसिंह वह व्यक्ति है जो रूसियों के लिये गुरु रामसिंह का एक पत्र लाया था। और अप्रेल 1880 में तुर्कस्तान के रूसी गवर्नर जनरल को गुरु रामसिंह के भाई बुधसिंह का एक और पत्र दिया था। वह 1880 में रूसी अधिकारियों के एक पत्र के साथ पंजाब लौटा जो गुरु रामसिंह के लिये था। वह पत्र भैणी साहब पहुंचा दिया गया जो बाद में बर्मा पहुंचा दिया जहां पर गुरु रामसिंह नजरबंद थे। गुरचरन सिंह को इन्हीं गतिविधियों के कारण गिरपतार करके मुलतान में नजरबन्द कर दिया गया था।

9 अक्तूबर 1880 को लुधियाना के जिला पुलिस कप्तान ने रिपोर्ट दी कि गुमटी के लालसिंह ने बताया है कि बुधसिंह ने उसे बताया कि उन्हें विशनसिंह का पत्र मिला है जिसमें कहा गया है कि रूसियों का बृटेन के प्रति शत्रुता का रवैया है।

13 अप्रेल, 1881 को लुधियाना के पुलिस कप्तान ने फिर रिपोर्ट दी कि किसी जासूस द्वारा प्राप्त सूचना के अनुसार विशनसिंह ने, जो इस समय मध्य एशिया में है, बावा बुधसिंह को संदेश भेजा है कि वह किसी विश्वास पात्र कूका को भेजें। फरवरी, 1882 मे जिला पुलिस कप्तान ने इस अफवाह का भी उल्लेख किया कि गुरु रामसिंह, विशनसिंह के साथ जा मिले हैं जो भारत पर हमले में रूसियों का मार्ग दर्शन करेंगे, जैसा कि कूका साखियों (कथाओं) में लिखा है।

8 सितंबर, 1883 को लुधियाना के जिला पुलिस कप्तान ने रिपोर्ट दी कि

दो सरकारी जासूसों को जम्मू में तैनात किया गया है ताकि वह फरार कूका कातिल भगवानसिंह उर्फ अड़वंगीदास को तलाश कर सकें। पर वह खाली हाथ लौट आये। जम्मू से वह हज़रो गये और कूका पंथ के संस्थापक बालक सिंह के भतीजे कान्हसिंह से मिले। उसीके घर में वह प्रसिद्ध कूका विशनसिंह अरोड़ा के चचेरे भाई हीरासिंह से मिले। उसने उन्हें बताया कि विशनसिंह, रूसियों की सेवा में है और उस सेवा में वह गुरुरामसिंह की इच्छानुसार शामिल हुआ है। चार मास पूर्व उसने काबूल में अपने रिश्तेदारों को लिखा था कि रूसी युद्ध की तैयारियां कर रहे हैं। उनका इरादा 1884-85 में भारत पर आक्रमण करने का है। हीरासिंह ने कहा कि भैणी के बाबा बुधसिंह ने चार कूकों और एक कूका महिला के हाथ विशनसिंह को दो पत्र भेजे हैं। जो अपने गन्तव्य स्थान पर पहुंच गये हैं।

पंजाब की विशेष ब्रांच की रिपोर्ट में 20 दिसम्बर 1884 को इस बात का उल्लेख था कि नौ कूके विशनसिंह से मिलने के लिए रूस गये हैं।

11 अक्तूबर 1884 को, गुरुदासपुर के जिला पुलिस कप्तान ने रिपोर्ट दी :

> "कहा जाता है कि सूबा विशनसिंह अपने 300 अनुयायियों के साथ बुखारा के शासक को सप्ताह में दो बार मिला। बुखारा का शासक रूसी सरकार की कठपुतली है।"

19 जून को लुधियाना के पुलिस कप्तान ने अपनी रिपोर्ट में कहा कि कशमीर में रहने वाला एक कूका कान्हसिंह भैणी साहब गया, उसने बुधसिंह को सूचित किया कि सूबा विशनसिंह ने उसे कहा है कि वह एक सौ नौजवान कूकों को रूसी सीमा में भिजवाने की व्यवस्था करें। बुधसिंह ने उसे सलाह दी कि वह स्यालकोट जाये, वहां उसे घूमते फिरते बहुत से कूके मिल जायेंगे।

4 दिसम्बर 1886 को फिरोजपुर के जिला पुलिस कप्तान ने रिपोर्ट दी कि उनके जिला में यह अफवाह फैली कि महारजा दलीपसिंह और कूका सूबा विशनसिंह रूसियो के साथ हैं।

इसी प्रकार जालंधर के जिला पुलिस कप्तान ने भी 23 जुलाई, 1887 को कहा कि होशियारपुर जिला के चौरा गांव में कूकों का एक मेला हुआ जिसमें और बातों के अतिरिक्त यह भी कहा गया कि रूस में सूबा विशनसिंह महाराजा दलीपसिंह के साथ मिल गये हैं और महाराजा दलीपसिंह भी सहायता से पंजाब पर आक्रमण करने की तैयारी कर रहे हैं। महाराजा दलीपसिंह का जिक्र आने पर कूके बहुत उत्तेजित हो गए और उन्होंने "चण्डी दी वार" का पाठ करना आरम्भ कर दिया जिसमें गुरु गोविन्दसिंह ने युद्ध की चण्डी देवी की स्तुति की है।

अंग्रेज के पुलिस अधिकारियों की गुप्त रिपोटों में और भी बहुत कुछ कहा गया है, जिनसे यह स्पष्ट हो जाता हैं कि सूबा विशनसिंह का रूस के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध जुड़ गया था और उसने महाराजा रणजीतसिंह के सबसे छोटे लड़के महाराजा दलीपसिंह के साथ भी संपर्क कर लिया था और दोनों पंजाब को अंग्रेजों की पराधीनता से मुक्त करवाने की तरकीबें सोचने लगे थे। भले ही उनकी योजनायें किन्ही कारणों से कार्यान्वित न हो पायीं।

विदेशों में भारतीय : कूका आन्दोलन से प्रभावित

वीसवीं सदी के आरम्भ में जिन परिस्थितियों वश पंजावी किसान विदेशों की ओर जाने के लिये वाध्य हुये, वे आर्थिक थीं। खेती के नये साधनों से अब भी अंतराष्ट्रीय मांग से समृद्धि का एक नया दौर आया। जहां इस समृद्धि से लोगों के जीवन का स्तर ऊंचा उठा, वहां किसानों की जरूरतों में भी वृद्धि हुई। इसके अतिरिक्त अंग्रेजी शासन काल में जन संख्या भी खूव वढ़ी। परिणाम स्वरूप खेतीवाड़ी पर निर्भर रहने वालों की संख्या भी वढ़ गयी। खेती करने वालों की यह वढ़ोतरी अधिकतर पंजाव के मैदानों से ही हुई थी।

कनाडा और अमरीका जाने वाले किसानों में अधिक संख्या केन्द्रीय पंजाव के किसानों की थी। इसका कारण यह हो सकता है कि उन्हें मुगल साम्राज्य के विरुद्ध टक्कर लेने और सिख राज्य के जंगी अभियावों में वढ़-चढ़कर भाग लेने और कूका आदोलन के ताजा अनुभवों ने कुछ अधिक साहसी बना दिया हो, क्योंकि इसमें कोई संदेह नहीं कि इन दिनों अपढ़, अनजान लोगों के लिए विदेशों में जाना अंधे कुएं में छलांग मारने के समान था।

अमरीकी तक कनाडा के अधिकारियों के अनुसार भारतीय श्रमिकों की सबसे पहली टोली 1895 और 1900 के मध्य अमरीका महाद्वीप में उत्तरी। एक मनचला सिख जो आस्ट्रेलिया जा चुका था और अंग्रेजी बोलना जानता था, वह और उसके इने-गिने साथी सवसे पहले प्रशान्त महासागर को पार करके कनाडा की वेनकोवर वन्दरगाह पर उत्तरे।

कनाडा और अमेरिका जाने वालों में अधिक संख्या उन लोगों की थी, जो मलाया, हांग कांग शंघाई तथा चीन की अन्य वन्दरगाहों से फिलिपाइन, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड तथा फिजी गये। चीन की वक्सर धरना के समय तथा इससे कुछ पहले पंजाबी इन देशों के पुलिस विभाग अथवा वाचमैन के रूप में काम

करते थे।

अमेरिका और कनाडा को हांग-कांग, शंघाई और फिलिपाइन आदि बंदरगाहों से प्रतिदिन जहाज आते। यात्रियों से भी वे अमेरिका कनाडा की समृद्धि के सम्बन्ध में वढ़ी चढ़ी वातें सुनते।

भारतीयों की जो पहली टोली कनाडा गयी, उसे नये देशों के वारे में जानकारी न होने के कारण काम की तलाश में कितने ही दिन इधर उधर पैदल भटकना पड़ा। कनाडावासी भारतीयों के सम्बन्ध में कुछ भी अनुभव नहीं रखते थे, लेकिन वे अधिक सोच-विचार में पड़ने के बजाय निर्णय करने वाले लोग थे। इसलिये उन्होंने भारतीयों की काम करने की क्षमता परखने के लिये, उन्हें कुछ कर दिखाने का अवसर दिया।

सवसे पहले उन्हें काम पर लगाने वाले कारखाने के मालिक ने उनके काम से खुश होकर लकड़ी चीरने वाले दूसरे कारखानेदारों से भारतीय श्रमिकों को रखने की शिफारिश की, और इस प्रकार उनकी मजदूरी ढूंढ़ने की समस्या किसी हद तक हल हो गयी। फिर उन्होंने रेलों की पटरियों ट्राम-लाइनों की मरम्मत, भवन निर्माण, दूध के लिये पशु रखने की कंपनियों फल तोड़ने तथा अन्य किसानी धन्धों में काम मिलने लगा। बृटिश कोलम्विया में जंगल वहुत काटे जाते थे। जमीन में वृक्षों की जो जड़ें रह जाती थीं, उन्हें मशीनों से साफ महंगा पड़ता था। भारतीय श्रमिक, शारीरिक श्रम कर सकते थे, इसलिये जड़ें खोदने के काम पर वे विशेष रूप से लगाये जाने लगे।

पहले तो ऐसे श्रमिकों की संख्या कनाडा में वहुत थोड़ी थी, लेकिन जव उन्होंने कनाड़ा में प्रचलित मजदूरी के वारे में अपने रिश्तेदारों और जानवारों को खवर भेजी, तो कनाडा जाने वाले भारतीयों की संख्या वढ़ने लगी।

श्री सोहनसिंह भकना, काम की तलाश में घूम रहे एक भारतीय को अपनी जान पहचान के कारखानेदार के पास ले गये। उसने पहले तो बहुत आदर सत्कार किया, पर आने का कारण वताया गया तो वह क्रोध से भर कर वोला :

> "मेरा दिल करता है, तुम लोगों को गोली से उड़ा दूं।" कारण पूछने पर उसने वताया कि तुम्हें शरम नहीं आती, मुट्ठी भर गोरों की गुलामी करते हुये। 'मैं तुम्हें बन्दूक और गोलियाँ देता हूं। पहले अपना देश आजाद करा कर आओ, फिर जहाज पर तुम्हारा स्वागत करने वाला पहला व्यक्ति मैं होऊँगा।"

विदेशी की इस अपमान जनक वात ने सोहनसिंह भकना के दिल में ज्वाला भड़का दी। देश पर मर मिटने वाले कूका योद्धाओं ने उनकी अंतर्रात्मा में वह

भावना पहले ही जागृत करदी थी, जो कूका आँदोलन के प्रवर्त्तक सतगुरु राम-सिंह जी ने भारतवासियों के दिल में जगायी थी। गदर पार्टी के आन्दोलन का प्रारम्भ कूका आँदोलन की प्रेरणा से ही हुआ, क्योंकि श्री सोहन सिंह भकना इसी आँदोलन की उपज थे।

एक नवम्बर 1913 को अमेरिका में रहते भारतीयों को 5, वुड स्ट्रीट सानफ्राँसिस्को, कैलिफेनियाँ में विशेष वैठकें की गयी तथा वहीं पर भारतीय गदर पार्टी की स्थापना की गयी। प्रसिद्ध नामधारी वावा सोहनसिंह को जो गांव भकना जिला अमृतसर के निवासी थे, गदर पार्टी का अध्यक्ष तथा भारत से निर्वासित प्रसिद्ध वुद्धिजीवी दिल्ली के लाला हरदयाल एम० ए० को पार्टी का सचिव निर्वाचित किया गया। 5, वुड स्ट्रीट, सानफ्राँसिस्को में पार्टी का मुख्य कार्यालय स्थापित किया गया।

वावा सोहनसिंह भकना एक प्रसिद्ध नामधारी संत वावा केसर सिंह महावा के शिष्य थे। सोहन सिंह एक वड़े जमीदार घराने से सम्वन्ध रखते थे। जवानी में वे अमीरों की सी बुरी आदतों का शिकार हो गये थे। और वर्वादी की राह पर चल पड़े थे। इनका सौभाग्य था कि वावा केसरसिंह भी संगति में आये और इनकी काया पटल हो गयी।

सोहनसिंह ने वावा केसर सिंह जी के साथ भैणी साहव जाकर सत्गुरु हरि-सिंह के दर्शन किये थे। और अपनी आँखों से अँग्रेज द्वारा नामधारियों पर चलाया जा रहा दमक चक्र देखा था। वैसे तो यह दमन चक्र 1863 से ही जारी था, मगर 1872 में 67 कूका वीरों को तोपों के आगे खड़ा करके उड़ा देने और सत्गुरु रामसिंह जी को वर्मा में लेजाकर नजरवंद कर देने के पश्चात् नाम-धारियों पर और अधिक सख्तियों का दौर शुरू हो गया था। सत्गुरु हरीसिंह जी को भैणी साहव से वाहर जाने के लिए लिखित रूप से अनुमति लेनी पड़ती थी।

दमन चक्र का शिकार : कूका सूबे

भारत माता के सच्चे सपूत, गुरु रामसिंह जी के विश्वस पात्र सूबे और पंजाब के एक उदीयमान देश भक्त सूबा साहब सिंह का देहावसान हजारी बाग (बिहार) की जेल में 10 जून 1879 में हुआ था।

सूबा साहब सिंह को भारत की धरती पर केवल पैंतालीस वर्ष जीने का अवसर मिला। इसमें से उन्होंने पन्द्रह वर्ष पंजाब में पुनः खालसा राज को स्थापित करने की लड़ाई पर लगाये और लगभग आठ बर्ष इस संग्राम की सजा के रूप में काटे।

जिस स्वतंत्रता का आज हम उपभोग कर रहे हैं, इतनी गहरी नींव में किन-किन लोगों के प्राण, रक्त तथा अस्थियाँ निहित हैं – कौन जानता है। इतिहास भी उन लोगों का ही जिक्र करता है जो किसी उदार लेखक की दृष्टि में आ गये—अन्यथा कौन परवाह करता है उन परवानों की जिन्होंने सच्ची लगन से अपना सर्वस्व देश के लिए न्योछावर कर दिया।

वैसे तो समूचा कूका आँदोलन इतिहासकारों के संकुचित दृष्टिकोण का शिकार रहा है, यह गुरुरामसिंह जी के बलिदानी अनुयाईयों का जिक्र तो कभी कोई विरला ही करता है। सुबा साहबसिंह भी उन दृढ़ संकल्प-कर्मयोगी, बलिदानियों में हैं जिन्होंने ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध तमाम उग्र संघर्ष किया। आपकी धुन और चतुराई से स्वतंत्रता की दीपाशिखा को सदा प्रज्जलित रखा—पर उसकी चर्चा बहुत कम है।

सुबा साहबसिंह के जीवन के विषय में जो प्राप्त सामग्री है, उसे क्रमबद्ध करने से पहले ब्रिटिश सरकार द्वारा किया गया उसका मूल्यांकन यहाँ दे रहे हैं ताकि प्रतिभावान साहबसिंह की गति विधियों का हम सही अनुमान लगा सकें।

पंजाब के सैशन जज मि० मैकनाव जिसे पिछले कुछ समय से 'कूकों से सम्बन्धित गवाहियाँ लेनी पड़ी और जिसके निर्णायों का नामधारी समाज पर गहरा प्रभाव पड़ा, उसने सूबा साहबसिंह के विषय में एक नोट में लिखा : "वह (साहब सिंह) बुद्धिमान, चतुर, दृढ़ निश्चय वाला तथा सूबों में एक योग्य व्यक्ति है। (गुरु रामसिंह एंड दी कूका सिखस; कम्पाईलर—नाहरसिंह पृष्ठ 91)

मि० मैकनाव की रिपोर्ट पर पंजाब सरकार ने गवर्नर जनरल को लिखा :

"यह सम्भव है कि एक आदमी केवल अपनी पदवी से खतरनाक हो सके ? अपने प्रभाव तक पदवी का जिक्र न करके जैसे साहबसिंह, गुरु रामसिंह, जी का सम्भावित उत्तराधिकारी हैं।

"·········शुरू करने के लिए, भले ही पहला व्यक्ति साहबसिंह है। साहबसिंह (गुरू) रामसिंह का नेपाल जाने वाले मिशन में राजदूत था। वह सब पुलिस अफसरों की किताबों में दर्ज है। जैसे (गुरु) रामसिंह का आशातीत उत्तराधिकारी उसका 'खुफिया सूबा', (गुरु) रामसिंह का लैफ्टीनैंट, "सदा (गुरु) रामसिंह के साथ, "सबमें सर्वाधिक सम्मानित सूबा" मि० मैकनाव ने उसे पढ़ा-लिखा, महत्वाकाँशी चालबाज और (गुरु) रामसिंह को सदैव उत्प्रेरित करने वाला बताया है।

पंजाब सरकार नोट करती है—"मि० मैकनाव सोचता है कि यदि सिर्फ उस अकेले को पंजाब में भेज दिया जाये तो 'कूकाइज्म' एकदम पुनर्जीवित हो उठेगा और (हमारे लिये) घातक सिद्ध होगा।"

(गु० रा० एंड दी कूका सिखस, पृ०3 101 102)

पंजाब सरकार की ओर से मि० मैकनाब की रिपोर्ट पर टिप्पणी लिखी गयी : "प्रारम्भ करने के लिये प्रथम व्यत्रित साहबसिंह है। यह एक सीधी गवाही है, उसके सक्रिय कूका प्रचारक होने के विषय में कुछ और भी सबूत हैं जिन्हें मेरे विचारानुसार एक ओर नहीं रखा जा सकता कि 'भैणी साहब' लोहड़ी के के समय सूबों में वह भी वहां मौजूद था और उसने हीरासिंह, लहनासिंह के जत्थे को मलेरकोटला की तरफ मार्च को प्रोत्साहित किया।

13 जून, 1872 : शिमला से हिन्द सरकार के अंडर सेक्रेटरी एच० डब्लू० वैलजली ने पंजाब सरकार के कार्यवाहक० सचिव को लिखा कि इलाहाबाद में कूके कैदियों के लिये उचित जगह नहीं है। उनके लिये शीघ्र ही आदेश जारी किये जायें। पंजाब सरकार के पूछने पर मि० जे० डब्लू० मैकनाब ने सब कैदियों के विषय में विचार करके निम्नलिखित निर्णय भेजा :

"मैं सिफारिश करूंगा कि (1) साहबसिंह, (2-3) लखासिंह तथा

कान्हसिंह को आजीवन निर्वासन में कैद रखा जाये। अन्य मामलों में पंजाब में कूकाइज़्म की स्थिति के अनुसार निपट लिया जाये।"

17 जुलाई, 1872 : पंजाब के डिप्टी इंस्पेक्टर पुलिस ई० सी० वेली ने लम्बी रिपोर्ट, टिप्पणियों तथा नोटों में तमाम कूकाशाही कैदियों के चरित्र पर प्रकाश डाला है। इसमें सूबा साहबसिंह जी को पहले नंबर पर लिखा है तथा साथ ही नोट दिया है कि इसे आजीवन देश से निर्वासित किया जाए।

लम्बी रिपोर्ट के अंतिम पैरों में लिखा गया कि अंडमान (काला पानी) इनके लिये उचित स्थान नहीं है। इनमें से तीन को मौलमीन (ब्रिटिश बर्मा) तथा तीन को अकथान भेजा जाये। शेष तीन के लिये असीरगढ़ का चुनार किला ठीक रहेगा। या फिर दोनों स्थानों पर बांट दिये जायें।

19 जुलाई, 1872 : मि० हौव हाऊस को लिखा कि कैदियों के विरुद्ध गवाहियों के आधार पर देखें कि उन पर कौन-सा केस बनता है। हौव साहब ने सब कुछ विचारकर बताया कि पैनल कोड की कई धाराओं के अंतर्गत कूके फंसाये जा सकते हैं। निम्नलिखित धाराएं सम्भव समझी गयीं—

(1) लड़ाई छेड़नी, दंगा करने की कोशिश करना अथवा मलिका के विरुद्ध ऐसी लड़ाई करने की भावना को उकसाना। इस गुनाह के बदले में मृत्युदंड दिया जा सकता है। एक्ट XLV, 1860 सैक्शन 121।

(2) किसी भी भावी हमले के लिए षड्यंत्र करना या मलिका की प्रभुसत्ता को छीनना, सरकार को अपनी शक्ति से डराना-धमकाना। इसकी सजा आजीवन देश निर्वासन हो सकती है। एक्ट XXVII, 1869 सैक्शन 121A।

(3) लड़ाई छेड़ने की तैयारी करना, इसकी सजा आजीवन देश निर्वासन हो सकती है। एक्ट XLV, 1861।

(4) लड़ाई आरम्भ करनी, लड़ाई छेड़ने की कोशिश या सारी एशियाटिक शक्ति के विरुद्ध लड़ाई के लिए उकसाना। इसके लिए आजीवन देश निर्वासन की सजा हो सकती है। एक्ट XLV, 1861 सैक्शन 125।

(5) किसी इलाके को लूटने का प्रयास करना या ऐसी कोई तैयारी करना। इस अपराध में सात वर्ष की कैद तथा जुर्माना हो सकता है। एक्ट XLV, 1860 सैक्शन 126।

(6) सरकार का नुकसान करने के लिए उकसाना। इसके बदले में आजीवन देश निर्वासन की सजा दी जा सकती है। एक्ट XXVII, 1860

सैक्शन 124A।

(7) ऐसा कोई भी अपराध करने के लिए उकसाना। एक्ट XLV, 1860 सैक्शन 107-108।

31 अक्तूवर, 1872 : हिन्द सरकार के सचिव मि० डेम्पियर ने उत्तर-पश्चिम प्रान्तों की सरकार के सचिव को कूकाशाही कैदियों को इलाहावाद किला में से निकालकर निम्नलिखित स्थानों पर नजरवंद करने के लिए लिए लिखा :

(1) वम्वई सरकार से पत्र-व्यवहार करके रूढ़सिंह, मलूकसिंह और पहाड़ासिंह को असीरगढ़ के किले में भेज दिया जाये।

(2) चीफ कमिश्नर व्रिटिश वर्मा से पत्र-व्यवहार करके जवाहरसिंह, लखासिंह तथा व्रह्मसिंह को मौलमीन भेज दिवा जाये।

(3) मानसिंह तथा हुक्मसिंह को चुनार के क़िले में भेजा जाये।

(4) साहवसिंह, कान्हसिंह तथा मंगलसिंह को अगले आदेशों तक इलाहावाद ही रहने दिया जाये।

लगभग साढ़े नौ महीनों तक कूका सूवों को पंजाब से दूर, सबसे अज्ञात इलाहावाद के किले में कड़े पहरे में रखा गया तथा उन्हें क्षमा-याचना के लिए भी प्रेरित किया गया। पर कोई भी ऐसा न था जो अपने इस कर्म को गुनाह समझता। कूका कैदियों को खत-पत्र करने या किसी को भी मिलने की आज्ञा नहीं थी। इस आदेश के लिए संवंधित जेलों को बार-बार चेतावनी दी जाती थी।

28 जून, 1872 तक पंजाव के गवर्नर को डिप्टी कमिश्नरों द्वारा पंजाब के सभी जिलों तथा रियासतों से राजा, महाराजा, नवाबों, जागीरदारों, सरदारों, म्युनिसिपल सदस्यों, जेलदारों, नंवरदारों तथा अन्य ऐसे लोगों (जो उठाईगीरी तथा अवसरवाद के कारण ही मजा मारते हैं) की ओर से मि० कावन तथा फोरसिथ के द्वारा कूकों पर ढहाये गये जुल्मों की सराहना भरी अर्जियां मिलीं। यह वही लोग थे जिनकी सहायता से अंग्रेज हमारे देश पर सौ वर्ष तक शासन कर सके।

24 जनवरी, 1873 : पंजाब सरकार ने कमिश्नरों, डिप्टी कमिश्नरों और इंस्पेक्टर जनरल पुलिस को लिखा कि कूकों पर लगी पाबंदी जारी रहे। पांच से अधिक व्यक्ति कहीं भी जमा न हों। सावधानी रखी जाये।

12 फरवरी 1873 : अदन द्वीप में पूरा प्रबंध करके, हिन्द सरकार की ओर से उत्तर-पश्चिमी प्रांतों की सरकारों को लिखा गया कि कूका कैदी साहवसिंह तथा कान्हसिंह को बंबई सरकार से तालमेल करके (इलाहाबाद से) अदन में भेज

दिये जायें। जब तक पंजाब सरकार की ओर से मंगलसिंह के बारे में सूचना नहीं मिलती, वह इलाहाबाद ही रहे।

12 फरवरी 1873 : गवर्नर जनरल इन कौंसिल के आदेशानुसार हिन्द सरकार के गृह विभाग के सचिव ने अदन के सुपरिंटेंडेंट जेल को लिखा : साहब-सिंह को निजी निगरानी में जेल में रखा जाये। अपनी देख-रेख में रखते हुए इसके साथ कठोर व्यवहार किया जाये। जैसे कि रैगुलेशन नम्बर 3, 1881 के अनुसार है।

25 मार्च 1873 : बंबई सरकार को पोलिटिकल रेजीडेंट अदन ने लिखा कि कूका शाही कैदी साहबसिंह तथा कान्हसिंह मेल स्टीमर 'पेशावर' द्वारा कल यहां पहुंच गये थे। उन्हें अदन जेल में नवनिर्मित क्वार्टरों में रखा गया है।

10 सितम्बर 1873 : गवर्नर जनरल के दफ्तर में बंबई की ओर से आयी रिटर्न के अनुसार बयान किया गया कि कैदी साहबसिंह का स्वास्थ्य ठीक है किन्तु दूसरा कैदी इंजुइनल हर्निया का मरीज है।

16 सितंबर 1873 : हिन्द सरकार ने गृह विभाग को लिखा कि कूका कैदी, जो अदन में हैं, जेल में न रखकर पुलिस की निगरानी में रखे जायें।

30 अक्तूबर 1873 : हिन्द सरकार को बंबई सरकार की ओर से बताया गया कि आदेशानुसार साहबसिंह तथा कान्हसिंह कूका कैदियों को पुलिस की निगरानी में रखना शुरू कर दिया है। इनके लिए दो विशेष निगरान नियुक्त कर दिये गये हैं। साहबसिंह तथा कान्हसिंह को उस घर में रहने दिया जा रहा है जिसमें पहले शाही कैदी यंग लाट को रखा गया है।

2 जनवरी 1875 : सुपरिंटेंडेंट जेल अदन ने फर्स्ट असिस्टेंट पोलिटीकल रेजीडेंट अदन को लिखा :

—दोनों कूकों पर अदन में रहने के कारण स्वास्थ्य पर प्रभाव पड़ा है।

—कान्हसिंह की आंखों तथा शरीर की दशा खराब हो गयी है। मेरी राय है कि इन्हें जलवायु बदलने के लिए अदन से किसी अन्य स्थान पर भेज दिया जाये।

अदन के जेल अधिकारियों के अनुरोध पर और इन दोनों कैदियों की शारीरिक अस्वस्थता को ध्यान में रखकर भारत सरकार ने निश्चय किया कि सूबा साहबसिंह और कान्हसिंह को हिन्दुस्तान की हजारी बाग जेल में रखा जाए। यदि वे अदन में रहे तो मुझे उनका जीवन खतरे में लगता है।

इस पर 15 मार्च, 1875 को बंगाल सरकार के जुडीशियल डिपार्टमेंट के सचिव ने हिन्द सरकार के सचिव गृह विभाग को लिखा कि हजारी बाग सेंट्रल

जेल में तो जगह नहीं है, एक पृथक् इमारत योरोपियन पैंटेशसरी में उन्हें रखा जा सकता है।

24 मार्च, 1875 : कमिश्नर पुलिस बंबई ने बंबई सरकार के राजनीतिक विभाग के सचिव को सूचित किया : एक गोरा इंस्पेक्टर तथा दो देसी सिपाहियों के साथ कल साहबसिंह तथा कान्हसिंह को वाया इलाहाबाद हजारी बाग भेज दिया गया है।

21 मई 1875 : सिविल सर्जन ने जेल सुपरिन्टेंडेंट हजारी बाग को लिखा : कूका साहबसिंह को डायबिटीज (मधुमेह) हो गया है। बीमारी गम्भीर प्रकार की है। यह धीरे-धीरे बढ़ रही है तथा दवा-दारू कम ही असर कर रहा है।

रिहाई

5 मई 1878 : बंगाल सरकार के जुडीशियल और राजनीतिक विभाग के सचिव ने हिन्द सरकार के गृह विभाग के सचिव को यह बताया कि जेल के इंस्पेक्टर जनरल को हजारी बाग के दोनों कूका कैदियों को उनकी बदली ब्रिटिश बर्मा में करने की दरख्वास्त की है। इससे चिढ़कर बंगाल सरकार के सचिव ने साथ ही लिख दिया : इस हकीकत की ओर ध्यान दिलाया जाता है कि जब इन कैदियों को केवल सख्त कंट्रोल में ही पैंटेशनरी में रखा गया है, कोई सख्त सजा नहीं दी गयी। यह और भी कठोर व्यवहार के योग्य हैं। विशेषकर तब तक, जब तक इनकी सजा अनिश्चित समय तक जारी रहती है। लेफ्टिनेंट गवर्नर को कोई कारण नहीं दिखता कि इनको ब्रिटिश बर्मा में क्यों बदला जाये? जो स्थान बिलकुल ही यहां की जलवायु से भिन्न किस्म के जलवायु का है।

25 जुलाई 1878 : पंजाब सरकार के कार्यवाहक सचिव ने शिमला से हिन्द सरकार के गृह विभाग को उसकी 12 जुलाई की चिट्ठी के उत्तर में लिखा :

"मैं तुम्हें बताना चाहता हूं कि महत्व की दृष्टि से साहबसिंह स्वयं (गुरु) रामसिंह कूका चीफ से अपने पंथ में दूसरे स्थान पर है। अतः कान्हसिंह अति कट्टरपंथी तथा प्रभावशाली कूका नेता है।"

"यह दोनों ही मेरे विचार से अपने पंथ में विशेष महानता रखते हैं। लेफ्टि-नेंट गवर्नर उन्हें जेल की चारदीवारी से बाहर घूमने की भी सिफारिश नहीं करते। इस तरह करने से वह अपने पंथ के अन्य सदस्यों तथा पंजाब से तालमेल करने में समर्थ हो जायेंगे।

अतः इस प्रकार पिंजड़े में पड़ा शाही कैदी साहबसिंह अपने स्वास्थ्य को ठीक नहीं रख सका। अदन जाते समय उसका स्वास्थ्य बहुत अच्छा था, पर दो वर्ष बाद ही जब वह हजारी बाग लौटा तो काफी कमजोर हो चुका था। हजारी बाग

आते ही दूसरे महीने साहबसिंह को मधुमेह हो गया तथा पंजाब सरकार के अड़ियल रवैये के कारण पांच वर्ष हजारी बाग जेल में, पुलिस की निगरानी में रहकर दम तोड़ गया।

जिस समय साहबसिंह ने अंतिम बार भारत भूमि को निराश आंखों से देखा तब उनकी आयु केवल 45 वर्ष की थी।

एक देश भक्त : दूसरे अंग्रेज प्रस्त

गुरु रामसिंह जी को देश से निर्वासित किये जाने के वाद पंजाब में नामधारी सिक्खों पर दमनचक्र चला और उनकी गतिविधियों को कुचला गया। इसके बावजूद सत्‌गुरु रामसिंह जी ने संघर्ष का जो बीज बीज बोया था, उसे अलग-अलग क्षेत्रों में अलग तरह से जारी रखने के प्रयास किये जाते रहे।

ईसाई मिशनरियों की गतिविधियां पूरे जोर-शोर से आरम्भ हो चुकी थीं। 1873 के प्रारम्भ में अमृतसर मिशन स्कूल के चार सिख छात्रों -- आयासिंह, अत्तरसिंह, साधुसिंह तथा संतोखसिंह ने ईसाई वनने की घोषणा कर दी। इस घटना ने कुछ प्रमुख सिखों को चिन्ता में डाल दिया। उन्होंने मजीठिया बुंगा (अमृतसर) में एक वैठक करके नया नया संगठन बनाने का निर्णय लिया। इनमें बाबा खेमसिंह वेदी, कपूर्थला के कंवर विक्रमसिंह, ज्ञानी हजारासिंह, स० ठाकुर-सिंह संधावालिए, ज्ञानी ज्ञानसिंह अमृतसरी तथा ज्ञानी सार्दूलसिंह प्रमुख व्यक्ति थे। संगठन का नाम 'श्री गुरु सिंह सभा' रखा गया।

इनमें से स० ठाकुरसिंह संधावालिए गुरु रामसिंह जी के परम श्रद्धालुओं में से थे। 1962 में जब गुरु रामसिंह अमृतसर आये थे, तब आपकी और स० ठाकुरसिंह संधावालिए की एक विशेष मुलाकात हुई थी।

यही स० ठाकुरसिंह संधावालिया सन् 1873 में अमृतसर में स्थापित सिंह सभा के अध्यक्ष बनाये गये'''। स० ठाकुरसिंह संधावालिए का स्वभाव कुछ अलग तरह का था। वह कई वार पुराना सिखी जोश जागृत हो जाने पर इतने उत्तेजित हो उठते थे कि अंग्रेज सरकार को जड़मूल से उखाड़ देने के सपने देखने लग जाते थे।

किन्तु स० ठाकुरसिंह संधावालिए के दूसरे साथी कंवर विक्रमसिंह सुधार-वादी थे। उनका उद्दृश्य सिर्फ सिखों को ईसाई बनने से रोकना और सिखों में

शिक्षा के प्रचार-प्रसार तक सीमित था। एक रियासती खानदान से सम्बद्ध होने के कारण वह अंग्रेज सरकार के विरोध का साहस नहीं कर सकते थे। इसीलिए आप अपनी गतिविधियों को सिर्फ सांस्कृतिक दायरे तक ही सीमित रखना चाहते थे। इनके तीसरे प्रभावशाली साथी बावा खेमसिंह बेदी स्वयं को सिर्फ धार्मिक गतिविधियों तक सीमित रखना चाहते थे। उनकी बुनियादी शर्त 'देहधारी गुरु' थी जिसमें उनकी पूरी आस्था थी। अंग्रेज जानता था कि साम्राज्य विरोधी आंदोलनों के साथ कैसे पेश आना है। उनका आरम्भ से ही यह प्रयास रहा था कि किसी भी अंग्रेज विरोधी संगठन में अपने आदमी भेज कर संगठन का स्वरूप बदलकर उसे अंग्रेज समर्थक बना दिया जाये।

'सिंह सभा' के मामले में अंग्रेज की प्रथम प्रकार की कोशिश सफल रही। सिखों का एक बड़ा भाग महाराजा रणजीतसिंह के समय से ही अंग्रेज प्रस्त बन चुका था और इस वर्ग ने अंग्रेज के साथ अच्छी वफादारी निभायी थी। अब 'सिंह सभा' का रुख परिवर्तित करने की आवश्यकता थी। इसके लिए उन्हें किसी व्यक्ति की तलाश थी और वह मिल गया। यह था कंवर विक्रमसिंह के खान-सामा का लड़का गुरमुखसिंह।

भाई गुरमुखसिंह कुशाग्र बुद्धि था। जब वह गवर्नमेंट कालिज में प्रविष्ट हुआ, तभी से अंग्रेज की नजर में चढ़ गया और गुरमुखसिंह भी अंग्रेज प्रस्ती के रंग में रंग गया।

1857 के गदर के समय सिख सरदारों की ओर से प्राप्त सहायता के पश्चात् अंग्रेज सरकार ने सिख धर्म के लिए विशेष सुविधाओं की व्यवस्था कर दी थी, सरकारी संरक्षण में चल रही शिक्षा संस्थाओं ने सिखों के अंदर भी नकल की भावना पैदा कर दी। धीरे-धीरे भाई गुरमुखसिंह अपनी जिस अंग्रेज प्रस्ती की लकीर पर चले, तो उन्हें सफलता भी मिलती चली गयी। वह 'सिंह सभा' के धार्मिक अंग्रेज विरोधी पक्ष पर छा गये। उनके द्वारा निर्धारित कार्यक्रम में एक यह भी था कि अंग्रेज सरकार के साथ जुड़कर चला जाये। उसका विरोध न किया जाये।

अंग्रेज सरकार अब पूरी तरह से जम चुकी थी। इसलिए अब उसे जनजीवन के धार्मिक पक्ष के समर्थन की जबरदस्त आवश्यकता थी, वह उन्हें भाई गुरमुख-सिंह जैसे अंग्रेज प्रस्त सिख नेताओं से मिल गया।

'सिंह सभा' का केन्द्रीय कार्यालय अमृतसर में था और भाई गुरमुखसिंह लाहौर में थे। इसलिए तालमेल में बाधा पडती थी। सन् 1857 के गदर के समय अंग्रेज की सहायता और अब भाई गुरमुखसिंह के प्रयत्नों से 'सिख धर्म' को

अंग्रेज शासकों का संरक्षण प्राप्त हो चुका था। अतः यह आवश्यक हो गया कि 'सिंह सभा' का मुख्य केन्द्र लाहौर में स्थापित किया जाये।

1879 को कुछ प्रतिष्ठित व्यक्तियों की बैठक बुलाई गयी और 'श्री गुरु सिंह सभा लाहौर' की नींव रख दी गयी। इस 'सिंह सभा' में किस प्रकार के लोग थे, उसके लिए एक उदाहरण ही काफी रहेगा। 'सिंह सभा लाहौर' के जो सदस्य लिये गये, उनमें कई सरकारी लोग भी थे। एक थे राय मूलासिंह। यह वही व्यक्ति थे, जो राजा तेजसिंह के एजेण्ट बनकर सन् 1847-48 में सिख राज्य के विरुद्ध अंग्रेज सरकार का साथ देते रहे थे। एच० एम० लारेंस से उन्हें एक प्रशंसा पत्र भी मिला था। उस समय राय मूलासिंह लाट साहब के दरबारियों में से थे।

तत्पश्चात सिखों की ओर से प्रार्थना किये जाने पर सर्व-प्रथम सर राबर्ट ईजरटन लाट साहब पंजाब और फिर सर चार्लस एचीसन 'श्रीगुरु सिंह सभा' के संरक्षक बने। इनके अतिरिक्त अन्य अंग्रेज अधिकारियों ने भी सिंह सभा की की शिक्षा शाखा की सदस्यता के का फार्म फरे।

सिंह सभा लाहौर का सदस्य बनने की जो शर्तें रखी गयीं, वह बड़ी दिलचस्व थीं। उन शर्तों के अनुसार अपने देश के ही अलग-अलग धर्मों के लोगों और विभिन्न जातियों पर सिंह सभा का सदस्य बनने पर प्रतिबंध था सिवाय ईसाई अंग्रेज प्रभु के।

सिंह सभा लाहौर की स्थापना के साथ ही इसकी टक्कर सिंह सभा अमृतसर के संचालकों के साथ शुरू हो गयी। अंग्रेजी सरकार लाहौर की सिंह सभा के समर्थन में सक्रिय थी और सिंह सभा लाहौर, सरकार की वफादारी में। अंग्रेज सरकार की सहायता के कारण सिंह सभा लाहौर, शहरों में फैलने लगी। मगर गांवों में उसका कोई प्रभाव नहीं था।

भाई गुरमुख सिंह की अध्यक्षता और अंग्रेज के संरक्षण वाली 'सिंह सभा लाहौर' का आंदोलन जैसे ही बढ़ता गया, वैसे ही सिखों में फूट और झगड़े बढ़ते गये। इसी दौरान में बाबा निहाल सिंह कलसिया (छछरौली) ने उर्दू में एक पुस्तक 'खुर्शीद खायसा' के नाम से लिखी। इस पुस्तक में गुरु रामसिंह जी को सिख परम्परा का बारहवां गुरु माना गया था। दूसरे महाराजा रणजीत सिंह के सबसे छोटे सपुत्र महाराजा दिलीप सिंह के इंगलैंड से वापस लौट कर 'खालसा राज' की स्थापना के सम्बन्ध में भविष्यवाणी की गयी थी। यह दोनों तथ्य अंग्रेज के विरुद्ध जाते थे। अतः भाई गुरुमुख सिंह ने इस पुस्तक के विरोध में संघर्ष छेड़ दिया।

सन् 1882 ई० में जब अभी 'खालसा दीवान लाहौर' की स्थापना हो ही रही थी तो महाराजा दिलीपसिंह के देश लौट आने की अफवाह उड़ी। वह उस समय इंगलैंड में थे। स० ठाकुरसिंह संधावालिए उनके पास इंगलैंड जा पहुंचे। महाराजा का आगमन सुनकर सरकार चिंतित हो उठी। महाराजा को तो रास्ते में से ही वापस कर दिया गया और पंजाब के सिखों को नियंत्रण में रखने के लिए और अधिक सतर्क हो गयी। खालसा दीवान लाहौर ने अंग्रेज भक्ति के वशीभूत होकर तीन प्रस्ताव पारित किये जो महाराजा दिलीप सिंह के विरुद्ध और अंग्रेज सरकार में पक्ष में थे।

महाराजा दिलीप सिंह के भारत आगमन की खबर सुनकर जहां अमृतसर सिंह सभा ने समर्थन में खुशी मनायी, वहां पर भाई गुरमुख सिंह की 'सिंह सभा, लाहौर' ने 30 अक्तूबर, 1889 को दिलीप सिंह को लिखा कि हम से कोई भी आशा मत रखना। जिसमें थोड़ी सी भी बुद्धि है, वह आपकी सहायता के लिए आगे नहीं आयेगा।

उपरोक्त तथ्यों से स्पष्ट हो जाता है कि अंग्रेज सरकार कैसे सिखों की देश भक्ति की भावना को कुचल देना चहती थी और अपने उद्देश्य की सिद्धि के लिए उसने फूट के बीज वो दिये थे। इसके वावजूद देश भक्ति की उत्कट भावना रखने वाले सिख तब भी मौजूद थे जिन पर कूका आंदोलन का प्रभाव स्पष्ट था। जिस आंदोलन को अंग्रेज सरकार ने सख्ती से कुचल दिया था।

इससे सिखों के दो वर्गों के चेहरे स्पष्ट हो जाते हैं। एक चेहरा देश भक्ति का और दूसरा अंग्रेज ग्रस्त लोलुप स्वार्थी सिखों का; जिनमें सामंत और उनसे प्रभावित अथवा बिके हुये लोग थे।

सत्गुरु प्रताप सिंह जी

सत्गुरु प्रताप सिंह जी का जन्म 1890 ई० को श्री भैणी साहब जिला लुधियाना में हुआ। पिता गुरु हरिसिंह जी तथा माता जीवन कौर जी के गृह में इस अटल प्रतापी के अवतरित होने पर समस्त नामधारी समुदाय में खुशी की लहर दौड़ गयी। सत्गुरु हरिसिंह जी को बालक के जन्म की जब सूचना दी गयी उस समय आकाश में से हलकी बूंदा-बांदी हो रही थी। सत्गुरु हरिसिंह जी ने कहा—बड़े प्रताप वाला आ गया है। पंथ का मालिक आ गया है। यह बड़े-बड़े काम करेगा और नामधारी संप्रदाय इन्हें पाकर धन्य हो जायेगा।

इस परमोल्लास के अवसर पर माता जीवन कौर तथा छोटे माता फतह कौर जी ने भैणी साहब, सारे गांव गुरुद्वारा में रह रहे परिवारों तथा आते जाते यात्रियों में सौ मन गुड़ बांटा। बालक का नाम प्रताप सिंह रखा गया।

साहबजादे प्रताप सिंह जब दो बरस के थे कि उन्हें चेचक निकल आयी। गांव में और लोगों को भी चेचक निकली थी। सवा महीने में अदि ग्रन्थ साहब के दस आखंड पाठ और बारह साधारण पाठों के भोग पाये गये। सवा महीने में वे पूर्णतः स्वास्थ्य हो गये।

साहबजादा प्रताप सिंह जी के पांच वर्ष के होने पर माता जीवन कौर ने गुरु हरिसिंह जी के सम्मुख प्रार्थना की कि प्रताप सिंह की शिक्षा का प्रबंध किया जाना चाहिये। गुरु हरिसिंह जी ने मस्ती में आकर कहा—यह पहले ही सभी विद्याओं का ज्ञाता है। यह जन्म से ही तेज प्रतापी है।

माता जीवन कौर जी साहबजादा प्रताप सिंह को बाबा संतोख सिंस के पास ले गये। माता जी ने उनके आगे भेंट रख कर कहा—इन्हें पढ़ाओ। संतोख सिंह ने कहा—गुरुजी का वचन है, यह तो पहले ही सर्व-ज्ञाता है। माताजी बोले—जगह की रीति का भी तो निबाह करना है। साहबजादा प्रताप सिंह जी जन्म से

ही मेधावी तथा बुद्धिमान थे। संतोख सिंह जी को अपने एक वार दिये सवक को दोवारा दुहराने की जरूरत नहीं पड़ती थी।

तत्पश्चात आपने कुछ शिक्षा संत ध्यान सिंह जी से गृहण की। सात वर्ष की आयु में आपने आदि ग्रन्थ साहव तथा दस वर्ष की आयु में दशम ग्रन्थ का वड़ी सरलता से पाठ करने लगे थे।

पंडित वसंत सिंह गढ़ पढ़ाना से साहवजादा प्रताप सिंह जी ने लघु सिद्धांत कोमुदी, हितोपदेस, पंचतंत्र और प्रवोध चन्द्र नाटक कुछ दिनों में ही पढ़ लिए। दाणिनी व्याकरण 'पंच संधि' आपने चौदह दिन में कंठस्थ तथा अंग्रेजी, हिन्दी, उर्दू का सामान्य ज्ञान आपने छोटी उम्र में ही प्राप्त कर लिया था। पंडित वसंत सिंह आपकी कुशाग्र बुद्धि पर आश्चर्य चकित रह जाते थे।

पंडित वसंत सिंह जी का जन्म स्थान गढ़ पधाना जिला जालंधर था। आप नामधारी पंथ के विद्वान उपदेशक थे। आपसे विधा प्रप्ति के पश्चात नामधारी पंथ में एक विद्वान मण्डली स्थापित हो गयी थीं। इस मण्डली में पंडित अमर सिंह, संत इन्द्र सिंह चक्रवती तथा पंडित मनशा सिंह 'कौमी' आदि शामिल थे।

पंडित वसंत सिंह जी ने संस्कृत की विधा निर्मंबा संतों की संस्कृत पाठशाला हरिद्वार से प्राप्त की थी। आपने कांग्रेस का प्रचार भी खूब किया और 1922 ई० में श्री भैणी साहव से गिरफ्तार कर लिए गये। आपके शिष्य पंडित मनशा सिंह 'कौमी' तक आपने कांग्रेस का काम करते हुये जेल की यंत्रणाएं भुगतीं और स्वतंत्रता संग्राम में तन-मन से योगदान दिया।

सत्गुरु हरि सिंह जी के द्वितीय साहबजादा निहाल सिंह जी का जन्म 1892 में तथा सबसे छोटे साहबजादा गुरदयाल सिंह जी का जन्म 1898 में हुआ था।

पंथ का नेंतृत्व और गतिविधियां

1906 में जब सत्गुरु हरिसिंह जी जब ब्रह्मलीन हुए, तब से 21 अगस्त, 1959 तक नामधारी पंथ का वह नेतृत्व करते रहे। 53 वर्षों का समय हमारे देश के इतिहास का एक संघर्षमय काल है। सतगुरु प्रताप सिंह जी 69 वर्ष और छः महीने इस संसार में रह कर महान कार्यों को सम्पन्न करते रहे।

1906 में सोलह वर्ष की अलप आयु में नामधारी पंथ का दायित्व सत्गुरु प्रताप सिंह जी के कंधों पर आ पड़ा जिसे आपने बड़ी कुशलता और दिव्य दृष्टि से निभाया और अपने कर्त्तव्य में कभी कोई कमी नहीं आने दी। आपने राष्ट्रीय कार्यों में सक्रिय भाग लिया और सामाजिक उत्थान के लिए महान कार्य किये।

1914 ई० में जब प्रथम महायुद्ध प्रारम्भ हुआ तो अंग्रेज शासकों ने सरकार के साथ सहयोग करने की शर्त पर नामधारियों पर से सभी प्रतिबन्ध उठा लेने की पेशकश की। आपने सरकार की उस पेशकश को ठुकरा दिया।

अकाली तथा अन्य दलों ने अंग्रेजी सरकार का साथ दिया और सेना भरती होने के लिए सिखों से अपील की, मगर नामधारी अपने ध्येय पर अडिग रहे और वह अंग्रेजों के किसी प्रलोभन में नहीं आये।

महायुद्ध समाप्त हुआ तो भारतीयों को पुरस्कार स्वरूप क्या मिला? रौल्टएकट जिसके विरूद्ध आवाज बुलन्द करने के लिये अमृतसर के जलियाँ वाला बाग में एक विशाल जन सभा आयोजित की गयी। इस सभा में भारी संख्या में नामधारी भी शामिल हुये। सरकार ने सैकड़ों देश भक्तों को गोलियों से भून डाला।

इससे आगामी राष्ट्रीय कांग्रेस का अधिवेशन अमृतसर में हुआ जिसमें नामधारी नेता महाराज गुरुदयाल सिंह, पंडित वसंतसिंह, संत मंगलसिंह अरशी

फरिश्ता, संत निधानसिंह अतिरिक्त पंडित मनशासिंह आदि।

अब नामधारी राष्ट्रीय कांग्रेस के प्रत्येक अधिवेशन और गतिविधियों में भाग लेने लगे थे। श्री भैणी साहब से पुलिस की चौकी उठवाने की माँग को लेकर स्थान-स्थान पर सम्मेलन होने लगे थे। अन्य राष्ट्रीय नेता भी इन सम्मेलनों में भाग लेते थे। इसी उद्देश्य के लिये 1921 को होशियार पुर में एक मेला आयोजित किया गया जिसमें मुस्लिम और कांग्रेसी नेता, सभी शामिल हुए थे। अंग्रेजी सरकार के विरुद्ध जोशीले भाषण हुए और सरकार की पोल पट्टी खोली गयी। तत्पश्चात, जिला लुधियाना के गाँव सियाहड़ में एक शहीदी सम्मेलन आयोजित किया गया। इस सम्मेलन में सरकार को चेतावनी दी गयी थी कि अगर सरकार ने श्री भैणी साहब से पुलिस की चौकी नहीं उठवाई तो वे स्वयं उठवा देंगे।

अब कुछ नामधारी अकाली मोर्चों में भी जाने लगे। सरकार को फूट डालने की नीति पूरी तरह से विफल हो गयी थी।

महाराज गुरदयालसिंह जी के नेतृत्व में संत मंगलसिंह अरशी फरिश्ता, संत निधानसिंह आलिम, पंडित दसंतसिंह मेहरसिंह सियाहड़, रतनसिंह कूका और पंडित मनसासिंह कौमी आदि कांग्रेस के साथ कंधा मिलाकर राष्ट्रीय गतिविधियों में सक्रिय हो गये थे।

1935 ई० को कांग्रेस की ओर से अंग्रेज सरकार के विरुद्ध एक मोर्चा लगाया गया, जिसका केन्द्र ब्रेडला हाल लाहौर था। संत मंगलसिंह, पंडित मनशासिंह और संत निधानसिंह आलिम ने इस मोर्चे का नेतृत्व किया और ग्रिफ्तारियाँ दी। कांग्रेस के कलकत्ता अधिवेशन में महाराज गुरदयालसिंह स्वयं शामिल हुये।

श्री भैणीसाहब भूमिगत देश भक्तों के लिये एक शरणगाह थी। कम्युनिष्ट नेता स० तेजासिंह स्वतंत्र और सोहन जोश काफी अर्सा भूमिगत रहकर अंग्रेज शासकों की आँखों में धूल झोंकते रहे। उन्हे सतगुरु प्रतापसिंह जी हर प्रकार से संरक्षण प्राप्त था। जन संपर्क विभाग पंजाब के पूर्व निर्देशक श्री राजेन्द्र लाल, अंग्रेजी शासन के समय सरकार के खिलाफ प्रचार करने के कारण भूमिगत रहे थे। और उन्होंने काफी अर्सा सत्गुरु प्रतापसिंह जी के पास रहकर व्यतीत किया था।

कामागाटा मारू जहाज के प्रसिद्धि प्राप्त देश भक्त बाबा गुरदित सिंह जी के साथ सतगुरु प्रतापसिंह जी के घनिष्ट सम्बन्ध थे। शहीद भगतसिंह, जिनके बलिदान ने अंग्रेजी शासन की जड़ें हिला दी थीं, नामधारी इतिहास से बहुत

प्रभावित थे। उन्हें देश भक्ति की प्रेरणा कूका बलिदानियों से मिली थी और उन्होंने नामधारी इतिहास पर दो लेख भी लिखे थे।

नेताजी सुभाष चन्द्र बोस भी कूका इतिहास से प्रभावित हुये थे। आजाद हिन्द फौज का जो केन्द्र थाईलैण्ड की राजधानी बैंकाक में था, उसके सप्लाई सचिव सेठ गुरबख्शसिंह प्रीतम थे। इस नामधारी परिवार के साथ नेताजी सुभाष चन्द्र के गहरे सम्बन्ध थे। उसी परिवार के चौथे स्थान पर छोटे भाई सेठ त्रिलोक सिंह नेताजी की कार की ड्रायवरी की सेवा भी निभाते रहे थे।

रतनसिंह बब्बर भी एक प्रसिद्ध देश भक्त थे जो अण्डेमान की जेल से फरार होने में सफल हो गए थे। वह कलकत्ता में पकड़े गये। जब उन्हें पंजाब में लाया जा रहा था, तो फिर फरार हो गये। पंजाब की पुलिस उनका पीछा कर रही थी। उस समय वह भैणीसाहब आये।

गुरमति संगीत को लुप्त होते देखकर सत्गुरु प्रतापसिंह जी ने की भैणी साहब में गुरुमति संगीत सम्मेलन का आयोजन किया। आपको गुरमति संगीत के सम्बन्ध में विशेष ज्ञान था। ध्रुपद गायकी अधिक पसंद थी। आपने अमृतसर के रबाबियों, भाई ताबा, भाई अनायत, भाई देसा आदि को कई बार श्री भैणी साहब में आमन्त्रित किया और उनसे प्राचीन गीतों को सुनकर उन्हें संभालने का प्रयास भी किया।

सिख पंथ की फूट से भी सत्गुरु प्रतापसिंह जी बहुत चिंतित थे। इसीलिये आपने भी भैणी साहब में 'गुरु नानक सर्व सम्प्रदाय सम्मेलन', का भव्य आयोजन किया। यह आपका एक सफल प्रयास था।

आपका कथन था कि गुरु नानक देव के धर्म का प्रचार प्रसार करने वाली सभी सम्प्रदायें गुरु नानक वाड़ी के फूलों की तरह हैं और इस वाड़ी में भांति-भांति के फूलों का अस्तित्व इसके सौंदर्य को बढ़ाता है। सभी को अपना समान प्रचार करने का अधिकार प्राप्त है। विरोध की भावना उस समय पैदा हो जाती है, जब आपसी एकता की प्रणाली से दूर हटकर विरोध एक दूसरे का खण्डन सरीखी रुचियों को अपना लिया जाये। इसी अपने दृष्टिकोण की कार्यान्वित, करते हुए आपने सिख पंथ कों एकता के लिए निरन्तर प्रयास किये।

सामाजिक पक्ष

समाज जीवन का वह पक्ष है, जिसके प्रत्येक नियम में बंधा मनुष्य चोटें भी खाता है, मगर न तो उसे बदल सकता है, और नहीं उसके बने नियमों को तोड़ कर मुक्ति प्राप्त कर सकता है। मनुष्य अपने भाग्य को तो बदल लेता है। पर

समाज को वदलना उतना सहज नहीं होता तभी तो मनुष्य को समाजिक प्राणी कहा गया है। समाज को वदलने के लिये महापुरुषों को घोर साधना करनी पड़ती है। नये समाज की सृजना के लिये किये इन सतत् प्रयासों के मार्ग में अनेक विध्न बाधाएं आती हैं। मगर महापुरुषों का संकल्प इन सभी बाधाओं को पार कर जाता है।

सत्गुरु प्रतापसिंह जी ने सत्गुरु रामसिंह जी के द्वारा दरशाये गये मार्ग पर चलते हुए सामाजिक कार्यों को परिपूर्ण किया। सबसे पहले आपने अनुभव किया कि देश और समाज में प्रचलित विवाह प्रणाली सर्वथा दोषपूर्ण हैं और इसे बदलना होगा। सत्गुरु प्रतापसिंह जी ने व्यर्थ के ताम-झाम और दिखावे को खत्म करने का प्रयास किया।

आज से जब कई दशक पूर्व आपने नामधारियों को आदेश दिया कि सभी नामधारी अपने बच्चों की विवाह शादियां नामधारी मेलों में करें। श्री सत्गुरु जी इस बात को भली भाँति समझते थे कि इन रीति रिवाजो के पीछे एक घातक रोग छिपा हुआ है जो समाज को जरजर बना देगा और देश को विनाश की ओर ले जायेगा। आपने अपने अनुयाई नामधारियों को माध्यम बना कर समाज की इस बुराई को खत्म करने का दृढ़ संकल्प किया।

सत्गुरु प्रतापसिंह जी के सतत् प्रयासों का ही परिणाम है कि आज नाम-धारी समाज न केवल स्वयं उन रीति रिवाजों के आडम्बर से बचा हुआ है वरन् भारतीय समाज के अन्य वर्ग के लोग भी नामधारियों की विवाह प्रणाली से प्रेरणा प्राप्त करते हैं।

सत्गृरु प्रतापसिंह जी ने अपने सिखों और अपने समाज में उस परम्परा को आगे चलाया जो गुरु नानक देव और सत्गुरु रामसिंह जी के जीवन दर्शन की धरोहर थी। हमारा समाज उस परम्परा से विमुख हो चुका था।

सत्गुरु प्रतापसिंह जी ने पुरुषों के समान स्त्रीयों को अधिकार देने का सतत प्रयास किया। देश विभाजन से पूर्व लोग स्त्रीयों को शिक्षा दिलाने के विरुद्ध थे मगर सत्गुरु जी ने ऐसी मर्यादा का निर्वाह किया कि यदि लड़का और लड़की दोनों अशिक्षित हैं, तो उनका विवाह न किया जाये। इस प्रतिबंध से एक नई जागृति आयी। साथ ही आपने यह शर्त भी रख दी थी कि भले ही लड़का और लड़की एम० ए० तक पढ़े हों, मगर साथ ही अपनी मातृ भाषा का ज्ञान भी आवश्यक है। सत्गुरु प्रतापसिंह जी दूर दर्शी थे। वह भली भांति समझते थे कि अपनी संस्कृति और परम्पराओं को जीवित रखने के लिए मातृभाषा का ज्ञान होना अति आवश्यक है और समाज का उत्थान इसी से सम्भव है।

अकाली मोर्चों में सहयोग

1914 ई० में जब सरकार ने गुरुद्वारा रकाबगंज की दीवार को गिरा दिया तो अधिकांश सिख संस्थाएं गहरी नींद सो रहीं थीं अंग्रेज सरकार की उस ज्यादिती के विरुद्ध सबसे पहले आवाज उठाने वाले नाम धारी नेता संत मंगलसिंह अरशी फरिश्ता थे। आपकी आवाज की गूंज जब सिख संस्थाओं के कानों तक पहुंची तो अखंड कीर्तनी जत्थे के भाई रणधीर सिंह ने मोर्चा लगाया। आपके सहयोगी प्रसिद्ध कांग्रेसी नेता स, सरदूल सिंह कवीशर थे। अंग्रेज सरकार ने संत मंगलसिंह जी की आवाज बन्द करने के लिये उन्हें उनके गाँव में नजरबंद कर दिया। संत मंगलसिंह जी के प्रेरणा स्रोत सत्गुरु प्रतापसिंह थे। अतः सत्गूरु जी ने स्वयं भी इस संघर्ष में सक्रिय मोड़ लिया। इसकी गवाही मा० तारासिंह जी की लिखित से मिलती है—

"..... मैं बाबा प्रतापसिंह जी के सम्बन्ध में इतना ही कहना चाहूंगा कि जब बाबा जी के मैंने पहली बार दर्शन किये थे। उसी समय गुरुद्वारा रकाबगंज की दीवार गिराई गयी थी और तभी अकाली आन्दोलन का सूत्रपात हुआ था। मैं और अकाली नेता तेजासिंह समुंदरी बाबा जी की सेवा में उपस्थित हुये थे। आपने उस समय लाहौर की सँगत का एक समागम किया जो अपने आपमें अद्वितीय था। बाबा जी गद्दी के मालिक थे, जिस घर बाबा रामसिंह विराजमान थे। आपने बड़े नाजुक समय सिख पंथ में जागृति पैदा की।"

अकाली मोर्चों में सबसे बड़ा मोर्चा जैतो का था जिसमें अकाली, नामधारी निर्मले संत और कांग्रेसी सभी शामिल थे। यहाँ तक कि पंडित जवाहर लाल नेहरू तक ने वहाँ जाकर अपनी ग्रिफ्तारी दी थी।

"......अंग्रेजी सरकार ने अकाली और कांग्रेस को एक साथ देखकर बड़ी चालाकी से काम लिया। महाराजा रिपुदमन सिंह, नाभानरेश को

नामधारियों से पृथक करने और अकालियों के साथ मिले हुये बताकर बदनाम किया और नामधारियों के प्रति रूख में नर्मी लाकर उन पर 1872 से लगे हुये प्रतिबन्ध हटा लिये गये। स्मरण रहे कि नाभा नरेश ने अपनी बीड़ वाली जमीन और उससे सम्बधित अन्य सम्पत्ति बाबा प्रतापसिंह जी को दानस्वरूप दे दी थी। लाट साहब के मुख्य सचिव मि० क्रेक ने नाभा के प्रशासक मि० उगलवी से कहा था कि नाभा नरेश ने बीड़ वाली जमीन जो नामधारियों को दे रखी है, वह उन्हीं के पास रहे। उनसे छीनी न जाये ताकि नामधारी अकालियों से सहयोग न करें। नामधारी अकालियों की इस चाल को भांप गये और उन्होंने आपसी मतभेद के रहते हुये भी नाभा आन्दोलन के सम्बन्ध में अकालियों के साथ सहयोग किया। वह अकाल तखत श्री अमृतसर से जैतों को जाने वाले शहीदी जत्थों में शामिल होते रहे जिनके प्रमाण उस समय के कई समाचार पत्रों में मिलते हैं।

सोहनसिंह जोश लिखित पुस्तक "अकाली मोर्चों का इतिहास" में लिखते हैं—

"जैतो के मोर्चे में लगभग बारह-तेरह निर्मले और नामधारी संतों ने भाग लिया था। धर्मसिंह नामधारी का नाम सरकारी दस्तावेजों में मिलता है जो जैतों जाने वाले शहीदी जत्थे में शामिल था। इसके अतिरिक्त संत बुड्ढासिंह नामधारी गाँव छोटी मखी, जिला लाहौर ने जैतों के मोर्चे ने अपनी गिरफ्तारी दी थी। संत ऊधमसिंह मरगिन्दपुर ने जैतों जा रहे जत्थे को अपने गाँव में रात्रि को रखा था। नामधारी दरबार ने उस समय जैतो के मोर्चे में भाग ले रहे अकालियों के समर्थन में प्रस्ताव पारित किया था—

"नामधारी दरबार को जैतों की खेदजनक स्थिति को देखकर अत्यंत चिंता है। और दरबार अंग्रेज की कारवाई को अति घृणा से देखता है। यह तो स्पष्ट है कि अकालियों का उद्देश्य केवल अखंड पाठ के लिये जाना और शांतमय ढंग से अपनी धार्मिक आजादी के लिये प्रतिरोध करना था। मगर सरकार ने आरोप लगाया कि पहले अकालियों ने गोली चलाई और बलात् इसे जारी रखा। अगर इसमें सच्चाई होती तो अकालियों के हथियार जरूर रियासत के हाथ लगते, मगर सरकारी चलान में ऐसी कोई बात नहीं है। वास्तव बात यह है कि रियासती शाषकों ने अपनी कार्यवाही को हर तरह से छिपाने की कोशिश की है। असेंबली के सदस्यों को स्टेशन पर उतारने नहीं दिया गया। दवादारू सहित उन डाक्टरों को गिरफ्तार करके जो जत्थे के साथ थे, और भी निर्ममता का सबूत गया दिया है। नामधारी दरबार की राय में इस मामले पर खुली जाँच के बिना

संतोष नहीं हो सकता । और नामधारी दरबार अकाली शहीदी जत्थों को उनकी वीरता के लिए बधाई देता है।

नामधारियों द्वारा अकाली मोर्चों में शामिल होने सम्बन्धी यह थोड़ा सा विवरण है।

सत्गुरु प्रतापसिंह जी और शास्त्रीय संगीत

सत्गुरु प्रतापसिंह जी बचपन से ही शास्त्रीय संगीत की ओर रुचित हो गये थे। नौ वर्ष की अल्प आयु में ही श्री गुरु ग्रन्थ साहब का पाठ करने लगे थे।

संगीत की परम्परा को श्री सत्गुरु प्रतापसिंह जी ने अपने पूर्वज सत्गुरुओं की भांति प्राप्त किया। संगीत के प्रति अधिक रुचि होने के कारण आपने भाई मस्तानसिंह पटियाला और भाई कालू नारोवाल से संगीत की शिक्षा प्राप्त की। दिलरुबा आपका प्रिय साज रहा है। बहुत से कलाकारों को आपने सम्मानपूर्वक अपने दीवानों में स्थान दिया। कई दरवेश कलाकारों से आपके निकट के सम्बन्ध थे, जैसे पंडित विष्णु दिगंबर तुलसकर, नजाकत अली और सलामत अली बचपन से ही आपके दरबार में जाकर हाजिरी देते रहे हैं।

सत्गुरु प्रतापसिंह जी को ध्रुपद तथा धमार के प्रति अथाह लगाव था। सत्गुरु जी सितार, सारंदा और दिलरुबा बड़ी कुशलता से बजाते थे। आप पखावज वादन में भी रुचि रखते थे। आप प्रातःकाल जब 'आसा दी वार' का कीर्तन करते, तो उस समय सभी रागों का अलग-अलग शब्दों में पृथक् ढंग से उच्चारण करते थे।

श्री आदि ग्रन्थ साहब में लिखित रागों को गाने का ढंग पड़ताल पौड़ी मिलाकर गाना, आदि की ओर सत्गुरु जी की अपने समय में विशेष रुचि रही। आप कठिन से कठिन विलम्बित स्वर में आसानी से स्वरबद्ध होकर गा लेते थे। धमार, तीन ताल, पंजाबी ठेका—आपके मनपसंद ताल थे। प्रसिद्ध गायक सिंह बन्धु श्री सुरेन्द्रसिंह के अनुसार—"सत्गुरु प्रतापसिंह जी एक संगीतमय आत्मा थे।" आप स्वयं 'ताऊस' बजाते थे और अपने सिखों की कीर्तन मर्यादा में उनका नेतृत्व करते थे। सत्गुरु जी एक महान ज्ञानी, संरक्षक और पंजाबी संगीतकारों का एक केन्द्र बिन्दु बन गये थे।

संगीत में आपकी रुचि इस सीमा तक थी कि जहां भी कोई संगीतकार मिल जाता तो सत्गुरु जी उसे सुनकर उसे समझने का प्रयास करते थे। गुरमति संगीत कला के साथ नाम वाणी के प्रचार हेतु सत्गुरु जी की एक विशेष लगन थी।

मध्य युग के भक्ति काल में संत संगीतकारों की लगभग सभी रचनाएं संगीत के गुणों से भरपूर थीं, जिनमें सिख गुरुओं ने विशेष रूप से महत्व दिया और अपनी रचनाओं को संगीतवद्ध करके राग की ऐसी शैली को जन्म दिया जिसे आज हम 'गुरु वाणी संगीत' कहते हैं।

पंजाब के आधुनिक काल का संगीत गुरु साहबान की देन है। मर्यादा के साथ कीर्तन करने का ढंग जो सबसे प्रथम है, रागी 'शान' बजाते हैं। जिस राग में वाणी का गायन करना हो, उस तंत्री साजों में बजाने की क्रिया को 'शान' अथवा 'लहरा' कहते हैं। यह परम्परा गुरु नानक देव जी के समय से ही चली आ रही है।

संगीत प्रथा की क्षति होते देखकर सत्गुरु प्रतापसिंह जी ने गुरु रामदास जी के दरबार की सम्प्रदाय के प्रसिद्ध विद्वान भाई तावा और भाई नसीर को श्री भैणी साहब बुलवाया था। आपने अपने दोनों साहबजादों वर्तमान सत्गुरु जगजीतसिंह जी और महाराज वीरसिंह को शास्त्रीय और शब्द गायन की प्राचीन रीतों की विरासत प्राप्त करने के लिए कई रागी रबाबियों की सहायता ली। महाराज वीरसिंह जी को विशेष करके पंजावी अंग के तवले की शिक्षा भाई कादर वख्श से दिलवाई।

विद्यार्थियों को गुरमति संगीत की शिक्षा दिलवाने के लिए आपने विशेष ध्यान दिया और इस उद्देश्य हेतु श्री भैणी साहब में एक विद्यालय की स्थापना भी की। वहां संगीत की शिक्षा देने के लिए संगीताचार्य भाई हरिनामसिंह चविन्डा की अध्यापक के रूप में नियुक्ति की गयी। विद्यालय में उस्ताद ऊधो खान, उनके सुपुत्र रहीम वख्श, भाई तावां और भाई नसीर वच्चों को संगीत में पारंगत वनाने में अपना योगदान देते रहे।

श्री भैणी साहव प्रारम्भ से ही गुरमति संगीत का केन्द्र रहा है। अनेक संगीत समारोह इस धरती पर हो चुके हैं। सत्गुरु प्रतापसिंह जी के समय प्रसिद्ध हजूरी रबाबी कीर्तनिए, भाई लाल, भाई सुंदर, भाई संदल, भाई मैंने परम्परा अनुसार कीर्तन किया करते थे।

श्री सत्गुरु प्रतापसिंह जी ने 1933 ई० में श्री भैणी साहब में गुरमति संगीत सम्मेलन आयोजित करवाया। इसमें पुरस्कार प्रतियोगिता भी करवाई गयी।

प्रतियोगिता के नियम थे कि जिस राग में वाणी की रचना हुई है, उसी राग में गायी जाये। दूसरा, तंतू साजों का ही प्रयोग होगा। इस प्रतियोगिता के जज थे :

भाई कान्हसिंह नाभा, स० मुकन्दसिंह अम्बाला, संत हीरासिंह और निहालसिंह। प्रथम पुरस्कार भाई हरनामसिंह ठट्ठा जिला फिरोजपुर, दूसरा पुरस्कार भाई लाल, रबाबी श्री अमृतसर, तीसरा पुरस्कार भाई समुंदसिंह जी, रागी ननकाना साहब को प्राप्त हुआ और अनेक रागियों को भी पुरस्कृत किया गया।

अनेक पक्ष जो सत्गुरु प्रतापसिंह जी के व्यक्तित्व के अंग रहे हैं, उनमें एक अंग संगीत का है जिसके आप महाविद्वान तथा कद्रदान थे। आपने गुरु घर की प्राचीन कीर्तन शैली की सार सम्भाल की, और उसका प्रचार-प्रसार भी किया। साथ ही शास्त्रीय संगीत की नवीन शैलियों का भी सम्मान किया। सत्गुरु प्रतापसिंह जी की कृपा से सत्गुरु जगजीतसिंह जी के पास गुरु ग्रन्थ साहब के रागों की प्राचीन रीतों का एक बहुत बड़ा खजाना सुरक्षित है।

पशु-धन

पंजाब में उन्नीसवीं सदी के मध्य तक तीन प्रकार की गो-नस्लें थीं। स्वदेशी, हरियाणवी, सफेद रंग की, कान पतले और छोटे, तीखे टेढ़े सींगों वाली, जो सिर्फ 200 दिन और वह भी कम-से-कम मात्रा में दूध देती थीं, मगर इसके बछड़े ठीक काम देने वाले बैल बनते, हिरन जैसे चुस्त। उत्तम किस्म के बैलों की जोड़ी 8-9 घंटे में एक एकड़ जमीन में हल चला देती (तब ट्रेक्टर से अभी खेती आरम्भ नहीं हुई थी।) दूसरी नस्ल मिंटगुमरी, मुलतान के इलाकों में पनप रही थी। इसका नाम था साहीवाल। गऊ मां अच्छी और दूध देने वाली थीं। उनका रंग लाल और चितकबरा होता। तीसरी नस्ल नागौरी भी चलती थी। यह राजस्थान के इलाके में प्रायः पाई जाती थी। करनाल का डेरी फार्म 'थारपरकर' नस्ल को उन्नत कर रहा था।

सत्गुरु प्रतापसिंह जी ने पंजाब के किसानों के लाभ को सामने रखकर हरियाणवी गाय को उन्नत करने की बात सोची। साहीवाल गाय को भैंसों के

मुकावले में अधिक दूध उत्पादन के लिए तैयार किया। नीली, रावी और मुरह नस्लों की सार-सम्भाल की।

श्री सत्गुरु रामसिंह जी के समय भी श्री भैणी साहब में एक विशालतम गो-शाला स्थापित हो गयी थी। पशुशाला गुरु घर के लिए एक अमूल्य निधि रही है। 1899 ई० को गांव बाह्मन माजरा के एक सिख ने सत्गुरु हरिसिंह जी को भैणी साहब आकर एक गाय भेंट की थी। यह चार फुट ऊंची गाय प्रति दिन 25 पौंड दूध देने वाली थी। इस गाय की नस्ल 1933 तक चली। इसकी नस्ल काफी देर तक चली और दूध देने के रिकार्ड तोड़ती रही।

इसी नस्ल की 'सुहानी' गाय ने तो 38 पौंड तक दूध दिया। इसी की संतान 'शिगारो' नाम की वछड़ी 1946 में हुई। 'शिगारो' लम्वे अर्से तक दूध देने वाली साबित हुई। 1953 में इसके जो वछड़ी हुई, उसका नाम 'वहार' रखा गया। 1956 में नागपुर में आयोजित सर्व भारत पशु प्रदर्शनी में 'वहार' ने साहीवाल नस्ल का प्रथम स्थान प्राप्त किया। 1956 में इसका दूध प्रति दिन अधिक-से-अधिक 30 पौंड तक रहा।

1921 में गुरु की पशुशाला को गुरु सर गदांडोव (जिला फरीदकोट) में से एक गाय भेंट की गयी। यह साहीवाल नस्ल की गाय थी, जो प्रति दिन 36 पौंड तक दूध देती थी। 1928 में साहीवाल नस्ल के एक सांड से मिलाये जाने के फलस्वरूप भोडी नाम की एक वछड़ी हुई। भोडी प्रति दिन 40 पौंड (18 किलो) दूध देती थी। आगे चलकर भोडी की सभी वछड़ियों ने 32 पौंड तक प्रति दिन दूध दिया।

इसी प्रकार टोडी, चितली तथा 'सुंदरी' नाम की गऊओं ने रिकार्ड तोड़ दूध किया।

सत्गुरु प्रतापसिंह जी यहां जीवन के अन्य क्षेत्रों में अग्रणी रहे, वहां पशु-धन की उन्नति की लगन भी आप में अधिकाधिक थी। सफर में होते तो आपकी पैनी दृष्टि चलते-चलते गाय की नस्ल को पहचान लेती थी।

साहीवाल नस्ल की दो गायें सत्गुरु प्रतापसिंह जी ने वायसराय के निजी डेरी फार्म दिल्ली में से खरीदी थीं। उनसे 'नौलखी' गाय प्राप्त की। नौलखी ने 302 दिनों में 7471 पौंड दूध दिया। सत्गुरु प्रतापसिंह जी के फार्म की साहीवाल नस्ल की अन्य उपलब्धियां थीं—हुक्मी, हिकमत, हेमी, हिरनी, गुलवहार और नौ करोड़ी। यह नौ करोड़ी मां नौलखी की संतान थी।

अब जरा उपलब्धियों पर एक दृष्टि—

—भोडी ने पहले टीडी नाम की वछड़ी दी (1948) और दूध दिया 383

दिन, अर्थात् साल से भी अधिक दिन। एक दिन का दूध 26 पौंड (11.82 किलो)।

—दूसरी बार भाग नाम की बछड़ी हुई, और उसने इस बार 300 दिन में 7000 पौंड (3181.82 किलो) दूध दिया।

—तीसरी बार भोडी ने 'हीरा' बछड़ा दिया। बहादुरगढ़ में 1954 को हरियाणा नस्ल की प्रदर्शनी में प्रथम रहा।

—चौथी बार भोडी ने 'मोती' को जन्म दिया। उत्तरी क्षेत्र की पशु प्रदर्शनी (पटियाला) में इसे उत्तर प्रदेश सरकार ने खरीद लिया। भोडी के पांचवें बछड़े 'मानक' को बिहार सरकार ने 2000/- में खरीद लिया।

इस प्रकार सत्गुरु प्रतापसिंह जी ने यहां नामधारी पंथ का अन्य क्षेत्रों में नेतृत्व किया, वहां पशु-पालन और पशुओं की नस्ल में सुधार हेतु अपना अभूतपूर्व योगदान दिया।

जमीन की खरीदारी : एक और परोपकार

देश विभाजन से पूर्व, सत्गुरु प्रतापसिंह जी ने नामधारी खेतिहर किसानों को जमीनों के मालिक बनाने का संकल्प किया। सरसा जिला में घग्गर नदी के साथ वाली जमीन पसंद की गयी। चार गांव चुंचाल कोठी, जगमलेरा, कंजरवाल और अलीपुर सेठ चंपालाल और धनपतसिंह आदि की मालिकी में थे।

लगभग दो हजार बीघा जमीन का क्षेत्रफल था। कृषक मुसलमान थे। इस क्षेत्रफल में से लगभग चौथा हिस्सा जमीन मौरूस थी जिसके मारूसी अधिकार भी मुसलमानों के पास ही थे।

सत्गुरु प्रतापसिंह जी ने अच्छा मौका देखकर नामधारी सिखों को आदेश दिया कि धनराशि की व्यवस्था की जाये। कुछ ही दिनों में धनराशि जमा हुई और जमीन खरीद ली गयी।

जमीन की रजिस्ट्री हो जाने पर एक बड़ा भारी मेला किया गया जिसमें आसपास के प्रतिष्ठित व्यक्ति पधारे।

जमीन की इस खरीदारी से कोई दो-तीन महीने बाद ही पाकिस्तान बन गया और पश्चिमी पंजाब से बहुत से नामधारी सिख और आ गये। सत्गुरु जी ने जिला अधिकारियों से मिलकर जमीन की सरकारी अलाटमेंट नामधारी सिखों के नाम करवाई। इस प्रकार अधिकतर नामधारियों को सिरसा जिला में जमीन की अलाटमेंट हो गयी। सरकार से लगभग दस गांवों का क्षेत्रफल नामधारियों के

लिए अलाट करवा लिया गया। इन जमीनों की बांट सत्‌गुरु जी ने स्वयं की। इस अलाटमेंट के लिए पूरे दो साल जालन्धर में काम चलता रहा। कई नाम-धारी सिखों के कलेम अन्य जिलों से कटवाकर इस इलाके में लाये गये।

यह ऊसर भूमि नामधारी सिखों ने बड़े कठिन परिश्रम से आबाद की। 1949-50 में यहां इतना अकाल पड़ा कि पशु-धन भूख-प्यास से अपने प्राण खो बैठता था। सत्‌गुरु जी का फर्मान था :

"मेरी आंखों में यहां पानी ही पानी दिखाई देता है। मेरी प्रबल इच्छा है कि यह गरीब सिख जो कभी भूमिहीन किसान थे और अब भूमि के मालिक बन गये हैं, उन्हें समृद्ध हुआ देख सकूं।"

नामा नरेश की दी हुई बीड़ की जमीन सत्‌गुरु जी ने गरीब नामधारियों में मुफ्त में बांट दी।

आज वही चुंचाल कोठी का गांव जीवन नगर कहलाता है। सत्‌गुरु प्रताप-सिंह जी का सपना साकार हुआ और आज हरियाणा के समृद्ध कृषि क्षेत्रों में जीवन नगर के नामधारी इलाके का अग्रणी स्थान है।

राष्ट्रीय आंदोलन में सक्रिय

सत्गुरु प्रताप सिंह जी अंग्रेज द्वारा चलाए जा रहे दमन चक्र के बावजूद राष्ट्रीय आंदोलनों में सक्रिय योगदान देते रहे।

1920 में कलकत्ता कांग्रेस के अधिवेशन में पंजाब के सम्मानित पदाधिकारियों की हैसियत के नामधारी नेता शामिल हुये। 1921 में, लाहौर में ऐतिहासिक कांग्रेस अधिवेशन के समय कूकों के हाथ में ही सारा प्रबंध था। तत्पश्चात 1930 में कांग्रेस द्वारा चलाये गये असहयोग आंदोलन में सत्गुरु प्रताप सिंह जी के छोटे भाई महाराजा निहाल सिंह सत्याग्रह के डिकटेटर थे और उन्होंने अनेक कारावास की यंत्रणाएं झेलीं। आपके साथ और भी बहुत से नामधारी जेलों में गये।

···1927 का वर्ष था। मुट्ठडा कलां, जिला जालंधर में मलेर कोटला के शहीदों की स्मृति में एक सम्मेलन हुआ। नामधारी शहीदों को श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए आयोजित यह एक विशुद्ध राष्ट्रीय तथा धर्म निरपेक्ष सम्मेलन था। सम्मेलन की अध्यक्षता सत्गुरु प्रताप सिंह जी ने की थी। इस सम्मेलन में तत्कालीन प्रसिद्ध हिन्दू तथा मुस्लिम नेता भी शामिल हुये थे।

····"17 जनवरी, 1927 को दुपहर के पश्चात 1 बजे श्री महाराज गुरदयाल सिंह, चौधरी गुलाम हैदर खां एडीटर 'सदाकत' लाहौर, लाला केदार नाथ सहगल, एडीटर 'खबरदार' लाहौर, भाई निधान सिंह 'आलिम' भाई इन्द्र सिंह चक्रबर्ती आदि लाहौर से लुधियाना जाने वाली ट्रेन में से फिल्लौर स्टेशन पर उतरे इनके स्वागत के लिए सेवा-समिति फिल्लौर और खिलाफत कमेटी लुधियाना के स्वयं सेवक तथा हजारों की संख्या में हिन्दू सिख उपस्थित थे। नेताओं के ट्रेन से उतरते ही 'सत् श्री अकाल' 'बंदे मातरिम' और 'अल्लाह अकबर' के नारों ने एक समय बांध दिया।

स्टेशन के सामने एक बैठक में इन नेताओं को ठहराया गया जहां स० किशन सिंह (शहीद भगत सिंह के पिता) मेहता आनन्द किशोर लाहौर, महात्मा नंद गोपाल और लाला मुन्शीराम (स्वामी श्रद्धानंद) स्वराज्य आश्रम, अमृतसर पहले से ही मौजूद थे।

सायं चार बजे सत्गुरु प्रताप सिंह जी भी अपने जत्थे सहित फिलौर पहुंच गये। तत्हश्चात बड़ी धूम-धाम से एक जुलूस मुठ्ठडा गांव के लिए रवाना हुआ जो सायं छ: बजे वहां पहुंच गया।

शहीदी सम्मेलन में सत्गुरु प्रताप सिंह जी ने जो अध्यक्षीय भाशण दिया, वह इस प्रकार था—

...."परमप्रिय हिन्दू, मुसलमान तथा सिख भाईयो! मैं आपका अति आभारी हूं जिन्होंने मुझे अध्यक्ष पद का सम्मान दिया है।

सबसे पहले मैं आपकी सेवा में यह बता देना उचित समझता हूं कि हमारे इस सम्मेलन का कारण और उद्देश्य क्या हैं? क्या हम यहां पर इसलिए जमा हुये हैं कि किसी व्यक्ति विशेष, किसी श्रेणी, अथवा किसी सरकार का अनुचित विरोध करें? क्या हमारे यहां एक मंच पर आने का यह कारण है कि हम देश में फूट, ईर्ष्या और विघटन का प्रचार करके, भारत के वास्तव स्वरूप को नष्ट करें? नहीं कदापि नहीं। हमारे यहां जमा होने का कारण उन 80 नामधारी सिख शहीदों की कुर्बानी से सबक गृहण करना है जो जनवरी, 1872 ई० में देश की आजादी और गऊ-गरीब के लिए लुधियाना के अंग्रेज डिप्टी कमिश्नर मि० कावन के जुलम का शिकार हुये और सत्गुरु रामसिंह जी को अपने देश, अपनी धरती तथा अपने सिखों से जुदा करके वर्मा में निर्वासित कर दिया गया। साथ ही नामधारी सूबों को भी भारत से दूर लेजा कर अलग-अलग जेलों में नजरबंद कर दिया गया। क्या अंग्रेज सरकार ने समझ लिया था कि उसने आंदोलन को कुचल डाला है? मगर कोई भी बुद्धिमान इस बात को मानने के लिए तैयार नहीं है।

"इस महात्मा गांधी का लक्ष्य सरकारी नौकरी, सरकारी स्कूल कालिजों तथा सरकारी अदालतों का बहिस्कार करके स्वराज्य के उच्च आदर्श तक पहुंचने का है। मगर सत्गुरु रामसिंह के सिख महात्मा जी के उपरोक्त लक्ष्य का प्रत्यक्ष उदाहण है। कोई नामधारी सरकारी नौकरी में नहीं है। और नहीं नौकरी करना पसंद करता है। सत्गुरु रामसिंह का सिख सरकारी अदालत में जाना पसंद नहीं करता। उनके फैसले अपनी पंथक पंचायतों में ही होते हैं। कोई नामधारी अपने बच्चों को सरकार के स्कूल कालिजों में भेज कर उनके अमूल्य

जीवन को नष्ट करना नहीं चाहता।

"यह मंजिल है 1872 ई० के असहयोग का परिणाम जो वर्तमान असहयोग आंदोलन अभी प्राप्त नहीं कर सका। इस बात को सिद्ध करने के लिए मुझे अधिक उदाहरण देने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि कलकत्ता के पुराने और प्रसिद 'अमृत बाजार पत्रिका' जैसे अखबार इस बात पर प्रकाश डाल चुके हैं। मेरा दावा है कि आज जो विदेशी सरकार के विरुद्ध देश में जागृति दिखाई दे रही है, वह अधिकतर मलेर कोटला के शहीदों तथा श्री सत्‌गुरु रामसिंह जी के निर्वासन सदका है।"

सत्‌गुरु प्रताप सिंह जी के अध्यक्षीय भाषण के पश्चात 'सदाकत' के एडीटर चौधरी गुलाम हैदर खां ने अपने भाषण में कहा—

"आज प्रेम और मिलाप का एक सुंदर दृश्य देखने को मिल रहा है। आज का दिन वास्तव में बड़ा ही सौभाग्य शाली है। दुनिया में से कभी जुल्म और सितम का खात्मा नहीं हुआ क्योंकि दिन के साथ अंधेरा और अंधेरे के साथ दिन का होना एक प्राकृतिक नियम है। अगर आप इतिहास के पृष्ठों में दृष्टि डालोगे तो हरेक सम्प्रदाय और श्रेणी में यह प्राकृतिक नियम दिखाई देगा। मूर्ख तो यह समझते हैं कि हम पर अत्याचार हुआ है, मगर बुद्धिमान पुरुष ऐसा नहीं मानते क्योंकि कि यह असावधानी के रोग की दवाई हुई है। अधिक पदार्थ वाले, हाथी घोड़ों वाले, महलों में निकास करने वाले बड़े लोग नहीं हैं। पर आपके दुख और दर्द के जो साझीदार हैं। वे बड़े और सम्मानीय हैं। हम में यह कमी रही है कि हम छोटों को बड़े और बड़ों को छोटे समझते आये हैं। जो बहुत धनी हैं, वे बहुत भूखे हैं। भाईयो ! हम पर कोई दूसरा अत्याचार नहीं कर रहा, हम स्वयं अपने पर कुल्हाड़ी चला रहे हैं। अंग्रेज कौम को अपनी नसल की छोटी हस्ती का कितना ध्यान है। वह चाहते हैं कि उनकी नसल भले ही दूनिया के किसी भूभाग में जाये, उसे सम्मान मिले। आप परमात्मा से उतना भयभीत नहीं होते, जितना एक गोरे से होते हो। इसका भाव यह हुआ कि अपने गुरुओं के उद्देश्य को त्याग कर इनके आगे झुकना स्वीकार कर लिया है। आप गहरी निन्द्र में सो गये। आपको जगाया है जलियां वाला बाग के काण्ड ने; अन्यथा आप कहां जागने वाले थे संसार की ओर दृष्टि दौड़ाओ, बिना बलिदान के कुछ नहीं होता। जो लोग बलिदानी नहीं होते, हमेशा पराधीनता की बेड़ियों में जकड़े रहते हैं।

मुट्‌ठडा कलां का यह शहीदी सम्मेलन एक ऐतिहासिक महत्व का था। यह इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण था कि जिस नामधारी स्वदेशी आंदोलन की नींव सत्‌गुरु राम सिंह जी डाल गये थे, उसे आपके वारिसों ने हर कुर्बानी देकर

जीवित रखने की शपथ उठाई थी।

1929 में कांग्रेस का वार्षिक अधिवेशन रावी नदी के किनारे पर हुआ। यह एक ऐतिहासिक सम्मेलन था जिसमें पूर्ण स्वराज्य का प्रस्ताव पारित किया गया था। सत्गुरु प्रताप सिंह जी ने अधिवेशन के अध्यक्ष पंडित जवाहर लाल नेहरू के जुलूस के लिए सौ घोड़े भिजवा कर जुलुस की शान बढ़ाई थी और हजारों की संख्या में नामधारी सिख जुलूस में शामिल हुए थे। अधिवेशन में भोजन का सारा प्रबंध सत्गुरु प्रताप सिंह जी की माता जीवन कौर जी की देख-रेख में नामधारियों की ओर से किया गया था।

मगर इस ऐतिहासिक सम्मेलन के सम्वंध में कुछ अकाली सिखों का व्यवहार बिलकुल अलग किस्म का था। प्रसिद्ध देश भक्त कामा गाटा मारू विद्रोह के नायक बाबा गुरदित सिंह ने अपने एक लेख में लिखा था :

"मैंने देखा, सिख नेताओं के आवाहन पर लगभग एक लाख अकाली गांवों से आये थे जो शाही किला लाहौर के इर्द-गिर्द छिपकर दिन काट रहे थे, क्योंकि उनके नेता बाबा खड़क सिंह का आदेश था कि जो सिख कांग्रेस के अधिवेश में जायेगा, उसे सिख पंथ से खारिज कर दिया जायेगा। मुझे यह बात बहुत बुरी लगी। हम लोगों ने विपरीत घोषणा करनी शुरू कर दी कि जो सिख कांग्रेस अधिवेशन में नहीं जायेगा, वह सिख नहीं कहलायेगा। इस घोषणा पर हजारों की संख्या में अकाली सिख कांग्रेस के मंडप की ओर चल पड़े। हमें चिंता हुई कि इतने लोगों के लंगर का प्रबंध कैसे होगा। मगर नामधारी सिखों ने कहा कि चिंता मत करो। भले ही एक लाख लोगों की ले आओ। लंगर तैयार मिलेगा। मुझे उनकी उदारता के आगे नत मस्तिक होना पड़ा।

सत्गुरु प्रताप सिंह का राजनीतिक, धार्मिक तथा सांस्कृतिक—सभी क्षेत्रों में योगदान रहा। सत्गुरु प्रताप सिंह जी गुरुवाणी के तो रसिया थे ही; इसके साथ ही गुरमति संगीत से भी आपको अगाध प्रेम था। जवानी में आपने स्वयं शास्त्री संगीत की शिक्षा प्राप्त की थी। आपने समय के वह गुरमति संगीत के महान ज्ञाता थे। और यही कारण था कि भारत के सुप्रसिद्ध संगीयाचार्य भैणी साहब की तपोभूमि में आते और संगीत का अमृतरस विखेर कर चले जाते। जब आपने भैणी साहब में नामधारी महाविद्यालय की स्थापना की तो उसमें विधिवत संगीत शिक्षा की व्यवस्था भी गयी और विद्यार्थियों के साथ अपने दोनों साहबजादों सत्गुरु जगजीत सिंह जी तथा महाराज वीरसिंह को शास्त्रीय संगीत में पारंगत करवाया।

सिख सम्प्रदायों तथा अन्य संगठनों की फूट से चिंतित होकर सत्गूरु प्रताप

सिंह जी ने 1934 में श्री भैणी साहब में गुरुनानक सर्व सम्प्रदाय सम्मेलन का भव्य आयोजन किया। इस सम्मेलन के अध्यक्ष सिख रियासतों के पुरोहित भाई अर्जुन सिंह बागड़ियां थे।

भाई अर्जन सिंह बागड़ियां के अतिरिक्त सिखों के गण्तमान्य नेता भाई कान्ह सिंह, प्रो. गंगा सिंह तथा मास्टर तारा सिंह यहां पर निर्मले, उदासीन, निरंकारी, राधास्वामी, सेवा पंथी तथा अन्य सिख सम्प्रदायों की ओर से सम्मेलन में मौजूद थे।

उस समय सिखों की फूट तथा कलह से खिन्न होकर अकाली नेता मास्टर तारा सिंह अज्ञातवास में चले गए थे। इस सम्मेलन में वह प्रकट हुए और जब सम्मेलन के मच पर आये तो सारा सभा मण्डप सत् श्री अकाल के जैकारों से गूंज उठा।

यह सत्गुरु प्रताप सिंह जी के प्रभावशाली व्यकित्व का ही चमत्कार था कि मास्टर तारा सिंह जैसे वरिष्ठ अकाली नेता सत्गुरु प्रताप सिंह जी के सिखों के विभिन्न समूह में परस्पर मेल मिलाप के सद्प्रयत्नों से प्रभावित हुये बिना न रह सके।

सगुत्रु प्रतापसिंह जी का जीवन दर्शन

सत्गुरु प्रतापसिंह जी का महान तथा आकर्षित व्यक्तित्व था। सिर्फ सोलह वर्ष की आयु में आपको अपने अंग्रेज साम्राज्य विरोधी समाज का उत्तरदायित्व सम्भालना पड़ गया था। आपके दृढ़ विश्वास तथा दूरदर्शिता ने शत्रु-मित्र-सभी को प्रभावित कर दिया था। हरेक को आपके महान व्यक्तित्व का लोहा मानना पड़ा। 53 वर्ष तक आपने नामधारी समाज का नेतृत्व किया। राजनीति के पंडितों को प्रभावित किया। अपनी प्राचीन परम्पराओं पर डटकर पहरा दिया। समाज सुधार के निर्णय दृढ़ता से लिये। आर्थिक दृष्ट से नामधारियों की समृद्धि हेतु सिरसा के जीवन नगर इलाके में कृषि योग्य भूमि खरीद कर उन्हें आबाद किया।

सत्गुरु प्रतापसिंह जी ने धर्म-कर्म को आडम्बर रहित रखने के लिये और नेक कर्म करने का उपदेश दिया। जीवन संघर्ष में जूझते जन साधारण को थोड़े समय के लिये एकान्त में एक घंटा नाम सिमरन (जाप) करने की रीति चलाई। आप कहा करते थे कि एक घंटा समाधि में रहकर जाप करना सारे दिन की पूंजी का काम करता है।

नामधारियों के लिये आपका संदेश था कि वे शुद्ध व सादा लिबास में रहें, ताकि देखने वाला आपके लिबास से प्रभावित हुए बिना न रहे।

जीवन काल में लाखों लोग आपके संपर्क में आये। इन संपर्कों के दौरान आपने हर प्रकार के लोगों की भावनाओं को पढ़ा। जब वह मनोविज्ञान का सहारा लेकर दूसरे की मन की बात को भांप जाते तो वँह चमत्कार हो जाता।

बच्चों के प्रति आपका दृष्टिकोण था : "पांच बरख तक लाड है ताड़न है खटि माहि"—। आप यह स्पष्ट कहा करते थे कि बचपन वह जमीन है जिसमें ऊँचे विचारों और शुद्ध व्यवहार के बीज बोए जा सकते हैं। बचपन के बने

संस्कार जीवन पर्यन्त साथ देते रहे हैं। अतः बचपन सुख में प्रत्येक को अच्छी संगति तथा साहसपूर्ण व्यवहार मिलना चाहिए। सत्‌गुरु प्रतापसिंह जी ने अपने दोनों साहबजादों के बचपन में रंचक मात्र भी अहम्‌ पैदा नहीं होने दिया। वह नामधारी महाविद्यालय के अन्य विद्यार्थियों की भाँति ही रहते थे। खाने-पीने तथा खेलने में अन्य से तनिक भी पृथक्‌ दिखाई नहीं देते थे। सत्‌गुरु प्रतापसिंह जी ने उन लोगों को गले लगाया हुआ था जो सांसारिक दृष्टि से घृणित थे, मगर आप मनुष्य के गुण की कद्र करते थे। किसी की जाति, रंग, रूप, दुर्बलता अथवा आस्तिक अथवा नास्तिक होना उनके लिये हेय चीजें थीं। वह तो गुण के ग्राहक थे।

यद्यपि सत्‌गुरु प्रयापसिंह जी की शिक्षा-दीक्षा विधिवत किसी स्कूल में नहीं हुई थी, मगर आपका अनुभव अद्वितीय था। एक वार सुनी हुई बात को वह कभी नहीं भूलते थे। उदाहरण स्वरूप 60 वर्ष पुरानी बात ज्यों की त्यों दोहरा देते थे। अंग्रेजी, हिन्दी, पंजावी का आपको व्यावहारिक ज्ञान था। पौराणिक साहित्य का पठन-पाठन आपने हिन्दी माध्यम द्वारा ही किया था।

पशु पालन को आप विशेष महत्त्व देते ये। इस संवंध में आपका ज्ञान देखकर केद्रीय तथा राज्यों के मंत्री स्तब्ध रह जाते थे। इसका जीवन्त उदाहरण श्री भैणी साहव तथा जीवन नगर की गौ-शालाएँ हैं।

आप दानी भी महान थे। जिसे आप दान का पात्र समझते थे, उस पर ऐसी कृपा-दृष्टि होती थी कि वह गुणगान करता जाता था। आपने अनगिनत लोगों की आर्थिक सहायता की जिससे उन लोगों ने भरपूर लाभ उठाया। आपके दान-पात्र सिर्फ नामधारी ही नहीं थे वरन्‌ अनेक संस्थाएँ तथा ग़ैर-नामधारी भी थे, जिन्हें वह दान का पात्र समझते थे, इनमें राजनेता, साहित्यकार और संगीतकार सभी किस्म के लोग होते थे। वह अपनी दिव्य दृष्टि से परख लेते थे कि उपरोक्त संस्थाएं अथवा व्यक्ति धन का दुरुपयोग नहीं करेंगे।

आपने कभी रातनीतिक अनाचारों का एक घड़े के रूप में समर्थन नहीं किया। अपने फैसले पर अडिग रहना आपके व्यावहारिक जीवन का एक उज्ज्वल पहलू था।

1872 से श्री भैणी साहव में स्थापित पुलिस चौकी को जब 1923 में उठवा देने के लिए अंग्रेज सरकार को वाध्य होना पड़ा तो वह सत्‌गुरु प्रतापसिंह जी सद्प्रयासों का परिणाम था।

इस संवंध में सत्‌गुरु प्रतापसिंह जी के अनुज महाराजा गुरदयालसिंह जी ने सतत प्रयास किये थे। आपने भारत के तत्कालीन समाचान पत्रों में लेख लिखे।

अंग्रेज सरकार झुक तो गयी, मगर उसने अपनी कुटलनीति को फिर भी नहीं छोड़ा। लुधियाना के डिप्टी कमिश्रर के निम्न पत्र से स्पष्ट हो जाता हैं कि वे तब भी श्री भैणी साहब की राजनीतिक तथा सामाजिक गतिविधियों को असामाजिक तत्वों द्वारा चलायी जा रही समझते थे।

पावंदी हटाये जाने के संबंध में मूल पत्र उर्दू में है, जो डिप्टी कमिश्नर, लुधियाना के कार्यालय से जारीं हुआ था।

डिप्टी कमिश्नर
लूधियाना डिस्ट्रिक्ट
12 मई, 1923

मुकरमी गुरु साहब-शौके खिदमत

गवर्नमेन्ट आलिया ने चौकी भैणी आला की पुलिस हटाने का फैसला किया है। लेकिन फिलहाल तजुर्वे के तौर पर ऐसा किया जायेगा। अगर गुरुद्वारे के पुजारी था यात्री लोग फिर किसी किस्म की मुजररा उठायेंगे या बदमाश व मफरूर लोगों को पनाह दी जायेगी तो गवर्नमेण्ट फिर चौकी कायम करने को मजवूर होगी।

हिज होलीनेस
महाराज प्रतापसिंह भैणी साहब
पोस्ट आफिस-हीरां
ब-रास्ता लुधियाना

आपका सादक
जी० सी० हिलटन
डिप्टी कमिश्नर
लुधियाना

अंतिका

अपने समय का कूका आंदोलन एक महान राष्ट्रीय आंदोलन था। इसके धार्मिक, सामाजिक तथा राजनीतिक सभी पक्ष अपने आपमें शक्तिशाली थे। कूका आन्दोलन भारत के स्वतंत्र संग्राम पर अपनी एक अमिट छाप छोड़ गया जो सदियों तक नई पीढ़ियों के लिए प्रेरणास्रोत बनी रहेगी।

अपनी पुस्तक के अंत में हम उन प्रसिद्धों पत्रकारों तथा राजनेताओं के विचार उद्धृत कर रहे हैं, जिन्होंने कूका आंदोलन की महानता को ही नहीं स्वीकारा, बल्कि इसे भावी संतानों के लिए इतिहास का एक अविस्मर्णीय पृष्ठ बताया है।

शहीद भगत सिंह

शहीद भगतसिंह की आयु उस समय सिर्फ बीस वर्ष थी, जब उन्होंने पंजाब के महान धार्मिक, सामाजिक तथा राजनीतिक कूका आंदोलन पर कलम उठायी थी। इससे स्पष्ट है कि मेधावी भगतसिंह की नजरों से कोई भी ऐसा आंदोलन छुपा नहीं रह पाया, जो अंग्रेज शासकों के विरुद्ध हो।

कूका आंदोलन पर शहीद भगतसिंह ने यह लेख फरवरी, 1928 में लिखा था जिसका सारांश नीचे प्रस्तुत है।

कूका विद्रोह

सिखों में एक साम्प्रदाय है जो नामधारी या कूका कहलाता है। इसका इतिहास कोई पुराना नहीं है। गत आधी सदी के वाद इसका प्रादुर्भाव हुआ था। इसके संस्थापक गुरु रामसिंह एक कट्टर क्रांतिकारीं थे। एक प्रसिद्ध ईश्वर-भक्त दोषपूर्ण समाज को देखकर एक विद्रोही समाज-सुधारक वन गए।। जब वह एक सच्चे समाज सुधारक की भांति कर्मक्षेत्र में कूदे और उन्होंने देखा कि देश की प्रगति के लिए पराधीनता की जंजीरों को ताड़ना अति आवश्यक हैं। विदेशी शासन के विरुद्ध क्रांति की तैयारी विस्तृत स्तर पर की। मगर तैयारी के दौरान कुछ हिंसा की घटनाओं का बहाना करके इस कांतिकारी आंदोलन को कुचल दिया।

कूका आंदोलन का इतिहास अभी लोगों के सम्मुख नहीं आया। हम समझते हैं कि हमारे लिए देश की खातिर मर मिटने वालों को भूल जाना बहुत बड़ी अहसान फरामोशी होगी।

नामधारियों के छोटे से इतिहास को हम तीन भागों में विभाजित कर सकते हैं—

1. गुरु जी का व्यक्तिगत चरित्र
2. कूका विद्रोह
3. विद्रोह के बाद

गुरु रामसिंह का जन्म सन् 1824 ई० में राईयां गांव जिला लुधियाना में हुआ था। कहते हैं गुरु गोविंदसिंह ने कभी कहा था—"मैं बारहवें रूप रामसिंह के नाम से प्रक्ट होऊँगा।" इसीलिए उनके अनुयाई उन्हें दस गुरुओं का अवतार मानते हैं।

गुरु रामसिंह जवानी में महाराजा रणजीत सिंह की फौज में भर्ती हो गये।

वह शुरू से ही ईश्वर-भक्त थे। इसलिए शीघ्र ही फौज में लोकप्रिय हो गये। सिख राज का पतन होने के बाद आप गांव में लौट आये और ईश्वर अक्ति में लीन हो गये। पहले तो आप ईश्वर भक्ति का ही उपदेश देते थे, फिर आप समाज-सुधार के सम्वन्ध में भी उपदेश देने लगे। लड़कियों की खरीदो-फरोखत शराब मांस आदि सामाजिक बुराई का आपने घोर विरोध किया। आपके अनु-याई सादगी का जीवन बिताते और प्रभु-भक्ति में लीन रहते थे।

तत्पश्चात् गुरु रामसिंह जी ने विदेशियों की पराधीनता के विरुद्ध भी मोर्चा खड़ा किया और अपने संगठन को और सुदृढ़ करने के लिए 22 सूबों (संगठन कर्ताओं) की नियुक्ति की।

जब पंजाब भर में कूका आंदोलन की जड़ें जमने लगीं तो अंग्रेज शासकों ने कुछ पाबंदियां लगा दीं, मगर आंदोलन फैलता चला गया। 1872 में समय से पूर्व ही विद्रोह हो गया जिसे सरकार ने कुचल दिया।

गुरु राम सिंह बड़े तेजस्वी और प्रभावशाली व्यक्ति थे। आप के रोकने पर भी कुछ नामधारी विद्रोह पर उतारु हो गये। अंग्रेज शासकों का दमन चक्र और तेज हुआ। और मलेर कोटला में तोपों के आगे खड़े करके बहुत से नाम-धारियों को शहीद कर दिया गया। दमन चक्र शुरू हुआ, न जाने कितने नाम-धारियों को जेलों में बंद कर दिया गया। फांसी पर लटका दिया गया। अनेक को उनके गांव में नजरबन्द कर दिया गया। इस दमन चक्र की तलवार पचास वर्ष तक नामधारियों के सिर पर लटकती रही। गुरु राम सिंह को गिरफ्तार करके बर्मा भेजकर नजरबंद कर दिया गया।

इधर भैणी साहब अंग्रेजी पुलिस की छावनी बन गया। छः साल तो भैणी साहब की ऐसी स्थिति रही, जैसे शत्रु ने घेरा डाल रखा हो। गुरु रामसिंह के के अनुज गुरुहरि सिंह को गुरुद्वारा के अंदर नजरबंद कर दिया गया था, न कोई अन्दर जा सकता था। यात्रियों को बहुत तंग किया जाता था।

कूका आंदोलन की व्यापकता का अनुमान उसी से लगाया जा सकता है कि इसने अपने राजनयिक सम्बन्ध नेपाल, कश्मीर तथा रूस तक के साथ जोड लिए। माराराजा रणजीत सिंह से सबसे छोटे साहबजादे महराजा दिलीप सिंह अंग्रेज सरकार विलायत ले गए थे और वहां उन्हें ईसाई बना लिया था। वह पंजाब लौटने लिए तड़प रहे थे और उन्होंने कूका आंदोलन के साथ संपर्क पैदा किया था, मगर उसे क्रियान्वित करने मं सफलता नहीं मिल सकी थी।

आज भी नामधारियों में सद्गुण देखे जा सकते हैं। उनमें ईश्वर-भक्ति अभी तक प्रधान है। सुबह उठ कर केशों सहित स्नान करके घंटों प्रभु भक्ति में लीन

रहना उनका नित्य कर्म है। मांस, शराब आदि के वह कट्टर विरोधी हैं। वह शब्द—कीर्तन करते मस्त होकर नाचते और कूक भरते हैं जिससे उन्हें कूका कहा जाता है। इनके कीर्तन से लोग अभिभूत हो जाते हैं और, आंखों से प्रेम तथा भक्ति के आंसू छलक आते हैं।

ग्यारहवें और बारहवें गुरु में आस्था रखने और मांस शराब के कट्टर विरोधी होने के कारण वह शेष सिख समाज से कुछ अलग हैं। इनमें समानता का भाव प्रबल होता हैं। यह स्वयं में निराले ढंग के लोग हैं। इन्हें देखकर उस अर्धखिले फूल की याद आ जाती है जो खिलते ही मसल दिया गया हो। गुरु रामसिंह की तमन्नाएँ दिल ही दिल में रह गयीं। उन अज्ञात लोगों के बलिदान का क्या परिणाम निकला, भगवान ही जानता है। मगर हम उनके बलिदान की स्मृति में उन्हें प्रणाम करते हैं।

प्रगतिशील चिंतक श्री हंसराज रहबर

श्री हंसराज रहबर हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक हैं। इनकी अब तक पचास से अधिक पुस्तकें विविध विषयों पर प्रकाशित हो चुकी हैं।

हिन्दी और अंग्रेजी में प्रकाशित पुस्तक 'शहीद भगतसिंह' में कूका आंदोलन पर लिखते हुये उन्होंने इस आन्दोलन को महान बताया है। 'भगतसिंह, एक जीवनी' स वह लेख हर यहां उद्धृत कर रहे हैं।

पहली अंग्रेज सिख लड़ाई 22 दिसम्बर 1845 को मुदकी के स्थान पर लड़ी गई। एक 29 वर्षीय सिख सैनिक अपने अनुभव से इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि पंजाब सेना शेरों की ऐसी सेना है, जिसका नेतृत्व गीदड़ कर रहे हैं। जब ढोल की आवाज पर युद्ध की घोषणा की जा रही थी, उसने अपनी बन्दूक और वर्दी सतलज में फेंक दी और गाँव में आकर खेती करने लगे।

यही युवक था जो, बाद में बाबा रामसिंह नामधारी के नाम से प्रसिद्ध हुआ। बाबा रामसिंह महान संगठनकर्ता थे। उन्होंने जीवन के बीस बरस किसानों को संगठित करने में लगा दिए। उनके अनुयायी 'नामधारी' अथवा कूका कहलाते थे। नामधारी इसलिए कि गुरु के उपदेश का आधार ईश्वर का नाम था। इसलिए उपदेश लेने बाद प्रत्येक व्यक्ति नाम को हृदय में धारण करने वाला अर्थात् 'नामधारी' कहलाता था। 'कूका' इसलिए कि वे भक्तिभाव

में मगन होकर खूब जोर से चिल्लाते अर्थात् कूकते थे। यों इस आदोलन का नाम 'नामधारी' अथवा 'कूका' पड़ा पड़ गया।

आजादी की पहली लड़ाई 1857 में लड़ी गई। उसमें अंग्रेजों के पाँव उखड़ गए थे, दिल्ली उनके हाथ से निकल चुकी थी और देश की शोषित उत्पीड़ित जनता फिरंगियों को मार भगाने के लिए उठ खड़ी हुई थी, लेकिन उस समय पंजाब का (विशेषकर सिख जनता का) नेतृत्व राजाओं और जागीरदारों के हाथ में था, जिन्हें आजादी नहीं, अपना स्वार्थ प्रिय था। उन्होंने स्वाधीनता संग्राम में हिस्सा लेने के बजाय अंग्रेजों की मदद की, जिससे पंजाब के माथे पर कलंक का टीका लगा। फिर भी पंजाबी फौजों में कहीं-कहीं बगावत हुई, लेकिन विद्रोही शूरवीरों को निर्दयता से कुचल दिया गया। उनकी शहादत ने कलंक को हल्का किया और "जतने दिन जीना आन-बान से जीना" रीति को जीवित रखा।

खुद अंग्रेज अधिकारियों ने इस बात को स्वीकारा है कि अगर पंजाब से मदद न मिली होती तो अंग्रेजों का हिन्दुस्तान में टिके रहना मुमकिन नहीं था। गदर के बाद अपने राज्य को मजबूत करने के लिए इन फिरंगियों ने जो जुल्म ढाये, उनकी मिशाल मानव इतिहास में शायद ही मिले। अनगिनत लोगों को तोपों के आगे खड़े करके भून दिया गया। पेट के बल रेंगने पर मजबूर किया। गाँव के गाँव जला डाले, पंजाब में निरन्तर कर्फ्यू और मार्शल ला जैसे कानून लागू कर दिए। ऐसा आतंक फैला कि सन्नाटा छा गया। मकसद भी यही था कि नसीहत मिले और हम दोबारा सिर न उठा सकें।

बाबा रामसिह की कूका लहर ने इस सन्नाटे को तोड़ा। शुरू में उनके आन्दोलन का रूप धार्मिक था। लेकिन स्वाधीनता उनके धर्म का अभिन्न अंग थी। जिस प्रकार शुरू में गुरू गोविन्द सिंह ने सिख धर्म को खालसा का रूप दिया, उसी प्रकार बाबा रामसिंह ने खालसा को नई परिस्थिति में "नामधारी' पंथ का रूप दिया। नामधारी बनाने वाले के लिए जरूरी था, कि वह मरने से न डरे। "सिर घर तली गली मेरी आओ" पर अमल करे।

आजादी की लड़ाई लड़ने के लिए जनसाधारण की चेतना को जगाना और एक मजबूत संगठन बनाना आवश्यक है। जैसे गुरु नानक ने यह काम समाज सुधार द्वारा शुरू किया था, वैसे ही बाबा रामसिंह ने भी किया। जब उनका आन्दोलन जनता में फैल गया और अनुयायियों की संख्या काफी बढ़ गई तो उन्होंने समाज सुधार का कार्य शुरू किया। चोरी, व्यभिचार, मदिरापान और मांसाहार ऐसी बुराइयां थीं, जिनसे नामधारी घृणा करते और समाज को

उनसे मुक्त करना चाहते थे। वे मूर्ति-पूजा के खिलाफ थे, उनका मत था कि ग्रन्थ साहब को पढ़ने के अलावा और कोई पूजा-पाठ नहीं करना चाहिए। उनके अपने गुरुद्वारे थे बाबा रामसिंह ने पंजाब को 22 हिस्सों में बाँट कर उनके सूबा (राज्यपाल) नियुक्त किए, जो चन्दा उगाहते और नये सदस्य भर्ती करते थे। उनकी अपनी सांकेतिक भाषा थी, जिसे सिर्फ वही समझते थे।

यों बाबा रामसिंह का धार्मिक आन्दोलन धीरे-धीरे सामाजिक आन्दोलन और फिर राजनीतिक आन्दोलन में परिवर्तित हो गया। यह समय की माँग थी। संगठन तेजी से फैला, कुछ ही वर्षों में हजारों-लाखों की तादाद में उसके सदस्य बन गए। नये रंगरूट भर्ती करने के जिए बाबा रामसिंह ने पंजाब, जम्मू और कश्मीर, उत्तर प्रदेश और मध्य भारत की यात्राएं कीं। सरकार की खुफिया रपटों में उन्हें ऐसा क्रान्तिकारी बताया गया है, जो ऐसी भाषा में बोलता है, जिसे जनता सहज में समझ लेती है, वह उनके भूमि-कर और जल-कर की बात करता है, वह असंतोष और राजविद्रोह फैला रहा है और उसमें देश-प्रेम की चेतना जगा रहा है।

बाबा रामसिंह जब आनन्द साहब, अमृतसर और लाहौर की यात्रा पर जाते थे तो उनके साथ शिष्यों का विशाल दल होता था, जो एक अनुशासित सेना की तरह घोड़ों पर सवार सफेद झंडे लिये गीत गाते हुए चलता था। नामधारी रामसिंह को सतगुरु बादशाह कहते थे।

अंग्रेज हाकिमों के लिए इस सबका अर्थ यह था कि नामधारिलों ने अपनी समानान्तर सरकार कायम कर रखी है। वे असहयोग आन्दोलन और उनकी बढ़ती हुई लोकप्रियता से बहुत परेशान थे। रामसिंह के साथ "पादशाही" शब्द का प्रयोग तो उनसे बिल्कुल ही सहन नहीं हो रहा था। वे इसे अपनी सत्ता के लिए चुनौती समझ रहे थे। उन्हें दो खतरनाक खबरें मिलीं : एक यह कि बाबा रामसिंह ने अपने आदमी कश्मीर और नेपाल की सेनाओं में भर्ती करा दिए हैं और वहाँ उन्हें युद्ध का प्रशिक्षण दिया जा रहा है। दूसरी यह कि कूका रूस के जार से सम्पर्क स्थापित कर रहे हैं ताकि उससे मदद ली जाए अंग्रेजों को हिन्दुस्तान पर रूस के हमले का भय हमेशा लगा रहता था। इस खबर ने उन्हें चौंका दिया और वे कूका आदोलन को कुचलने का अवसर खोजने लगे।

1871-72 में कूकाओं ने अपना ऐतिहासिक कार्य प्रारम्भ किया। मलेर कोटला, नाभा, पटियाला और जींद की रियासतों पर, जिन्होंने 1857 में

अंग्रेज की मदद की थी और अब भी अपनी वफादारी जताने के लिए देशभक्ति के हर आन्दोलन को दबातीं थीं विस्तृत आक्रमण की योजना बनाई और यह निर्णय लिया कि अम्बाला और लुधियाना के बीच रेल का सम्बन्ध काट दिया जाए। लेकिन इससे पहले ऐसी घटनाएँ घटित हुईं कि कूका आन्दोलन पटरी से उत्तर गया और शत्रु को उस पर प्रहार करने का अवसर हाथ लगा।

अंग्रेजों ने घोषणा की थी कि धर्म में किसी प्रकार का दखल नहीं देंगे। यह घोषणा ही घोषणा थी। दखल वे खूब देते थे और दखल यों देते थे कि एक धर्म को दूसरे धर्म से लड़ाने का षड्यंत्र रचते थे। 1857 में उन्होंने मुगलों के अत्याचार गिनवाकर सिखों की मदद ली और उसके बाद मुसलमानों को उकसाया। महाराजा रणजीत सिंह के राज्य में कहीं भी गोवध नहीं होता था, अब जगह-जगह बूचड़-खाने खुल गए और सिखों हिन्दूओं को चिढ़ाने, अपमानित करने के लिए खुले आम गो हत्या होने लगी। गोभक्त कूका वीरों यह सहन नहीं होता था। 1871 में उन्होंने अमृतसर और रायकोट के बूचड़खानों पर आक्रमण किया और वहाँ जितने मुसलमान कसाई थे उन सबकी हत्या कर दी इस अपराध में कूका वीरों को फाँसी लगा दी गयी।

सिखों ने महसूस किया कि निर्दोषों को फाँसी लगा दी गई है। बदले के लिए हिंसा की आग प्रचण्ड हुई। मलेरकोटला की घटना ने इस पर तेल छिड़का।

13 जनवर 1872 को भैणी में हमेशा की तरह माधी उत्सव पर दरबार लगा। लोग उसमें शामिल होने के लिए हजारों की तादाद में आने लगे। एक कूका वीर रियासत मलेरकोटला के इसी नाम के शहर में से गुजर रहा था। उसने देखा कि एक बैल पर बहुत-सा बोझ लदा है और एक मुसलमान उस पर बैठा बैल को बेरहमी से पीट रहा है। कूका वीर ने उससे कहा: "भाई, इतना जुल्म न कर। बोझ तो पहले ही बहुत हैं। तू नीचे उतर आए तो क्या हर्ज है।" इस पर मुसलमान ने गाली दी तो कूका वीर ने ईंट का जवाब पत्थर से दिया। नौबत हाथा-पाई की आ गई। रियासत के बन्द दिमाग कर्मचारी कूका वीर को पकड़कर कोतवाली ले गए। वहाँ उसे बुरी तरह पीटा, बेइज्जत किया और उस बैल को भी उसकी आँखों के सामने मार डाला। रिहा होने ही वह भैणी पहुंचा और भरे दरबार में यह घटना कह सुनाई। कूके उत्तेजित हुए और बाहुबल से बदला लेने का निर्णय लिया। जोश देखकर बाबा रामसिंह घबराए। गले में पल्लू डालकर विनती की, "लालसाजी, क्या अनर्थ करते जा रहे हो? शान्ति

और धीरज से काम लो। जरा सोचो, इस सवका परिणाम क्या होगा। वना-वनाया काम विगड़ जाएगा।"

अधिकांश लोग शांत हुए, पर 150 नहीं माने। उन्होंने पटियाला के सकरौंदा गांव के दो जाटों के नेतृत्व में मलेरकोटला की ओर कूच कर दिया। उनके पास सिर्फ फरसे और लाठियाँ थीं।

वावा रामसिंह ने यह सोचकर कि हजारों में से अगर डेढ़ सौ गिरफ्तार हो जाएँ तो क्या, आन्दोलन तो बच जाएगा, पुलिस को सूचित कर किया।

पर सरकार ने उन्हें रोकने के बजाय मलेरकोटला की ओर बढ़ने दिया। वह तो चाहती ही थी किकोई उत्तेजित घटना हो और वह उसके बहाने पूरे आन्दोलन को कुचल डाले।

कूका योद्धाओं ने 14 जनवरी को बड़ी आसानी से मलौद के किला पर कब्जा कर लिया। यह किला वदनसिंह नाम के सिख जागीरदार का था। कूका चाहते थे कि इस धर्म युद्ध में वह उनकी अगुवाई करे। जब वदनसिंह नहीं माना तो लड़ाई हुई। दोनों तरफ दो-दो आदमी मारे गए और कुछ घायल हुए। वहां से वे कुछ घोड़े, हथियार और एक तोप लेकर चले आए।

दूसरे दिन अर्थात् 15 जनवरी 1872 को सुवह 7 वजे वे मलेरकोटला की ओर वढ़े। ब्रिटिश सरकार ने रियासत की सरकार को पहले ही सूचना दे दी थी। उसने जवर्दस्त तैयारी कर ली थी। लेकिन कूका दल इतनी वीरता से लड़ा कि रियासत की पुलिस और फौज उसके सामने टिक नहीं पाई। वे सीधे महल में जा घुसे और खजाना लूटने की कोशिश की। खजाना वे लूट लेते, लेकिन एक गलत दरवाजा तोड़ने में समय नष्ट हो गया। इतने में रियासत की फौज ने अधिक शक्ति के साथ आक्रमण किया। लड़ाई में शत्रु के 4 सैनिक मारे गए और 15 घायल हुए। कूका दल के भी सात व्यक्ति खेत रहे। वे कुछ घोड़े और कुछ हथियार लेकर भाग निकले। वे भाग रहे थे और लड़ रहे थे और अपने घायलों को भी उठाकर ले जा रहे थे। वे पटियाला रियासत के रूहर गाँव में पहूँचकर घने जंगल में जा छिपे।

लुधियाना के डिप्टी कमिश्नर को मलौद और मलेरकोटला की घटनाओं का पता चला तो वह गोरखा सेना लेकर आ पहुँचा। और उधर से पटियाला की फौज भी आ गई। कूका योद्धा थके-हारे और भूखे प्यासे थे, कहाँ तक लड़ते। 68 आदमी गिरफ्तार हुए, उनमें दो स्त्रियां थीं, जो पटियाला राज्य की रहने वाली थीं। उन्हें पटियाला रियासत को सौंप दिया गया। 66 व्यक्तियों को मलेरकोटला लाया गया।

17 जनवरी के दिन 50 व्यक्तियों को हजारों दर्शकों की उपस्थिति में ताकि नसीहत मिले तोप के आगे रखकर उड़ा देने के लिए खुले मैदान में लाया गया। वहाँ भी उन्होंने अद्वितीय साहस का परिचय दिया। उनमें से हर एक अपनी-अपनी वारी पर नपे-तुले कदमों से आगे बढ़ता था और 'सत श्री अकाल' का जयकारा लगाते हुए सिर तोप के सामने कर देता था। दूसरे ही क्षण गोला छूटता और वह जाने किस दुनियां में जा पहुँचता था। 49 आदमियों को एक एक करके तोप से उड़ा दिया गया, पचासवाँ व्यक्ति तेरह वरस का बालक था। मिस्टर कोवन की पत्नी को उस पर तरस आया और पति से उसे छोड़ देने की सिफारिश की। कोवान उसके पास गया और झुककर बोला : "बेवकूफ राम-सिंह का साथ छोड़ दे तुझे मुआफ कर दिया जाएगा।" गुरु के लिये अपशब्द के प्रयोग से वालक को क्रोध आया। उसने उचक कर कोवन दाढ़ी पकड़ ली और तब तक नहीं छोड़ी, जब तक उसके दोनों हाथ नहीं काट दिए। उसे अंग-अंग काटकर शहीद कर दिया गया।

शेष 16 व्यक्तियों को मलौद ले जाकर अगले दिन फाँसी दे दी गई। यह सब बिना मुकदमा चलाए हुआ। विदेशी सरकार ने अपसे न्याय विधान को उठाकर ताक पर रख दिया।

अब दमन चक्र चला। कूकाओं को गुरुद्वारों और मन्दिरों में खोज-खोज कर नृशंसता से मारा गया। बाबा रामसिंह के वृद्ध और बीमार पिता तक को नहीं बख्शा गया। बावा रामसिंह को गिरफ्तार करके रंगून भेज दिया गया। वहाँ। 13 वर्ष बाद 1886 में मर्गोइ जेल में उनकी मृत्यु हो गई। पर जैसे नेताजी सुभाषचन्द्र बोस के अनुयायियों को आज तक उनकी मृत्यु पर विश्वास नहीं हुआ वैसे ही बाबा रामसिंह के श्रद्धलुओं को भी नहीं हुआ। अफवाह फैली कि वे रूस चले गए हैं और वहाँ से हमले की तैयारी कर रहे हैं।

कूका लहर को चाहे कुचल दिया गया, पर कूका शूरवीरों के उत्कट साहस और वीरता की कहानियाँ पंजाब के आनवान से जीने वाले सपूतों का खून आज भी गर्माती है।

बाबा रामसिंह क्रांति का प्रतीक बन गए और वे अपने पीछे जो 'कूक' अर्थात् अनुगूंज छोड़ गए, वह एक प्रेरणादायक शक्ति बनकर पंजनद के वातावरण में सदा ध्वनित प्रतिध्वनित होती रही, हो रही है और होती रहेगी। इसी अनुगूंज ने देश-भक्ति और शहीद का जो इतिहास बनाया. उसका जायजा लेते हुए सहीद भगतसिंह ने लिखा है :

"गुरु रामसिंह की अगुवाई में हुए कूका विद्रोह से लेकर आज तक जो

आन्दोलन चले और जिस प्रकार जनता में यह चेतना आई कि, वह स्वतन्त्रता की वलिवेदी पर अपना सव कुछ कुर्वान करने के लिए तैयार हो गई और जिन व्यक्तियों ने प्राणों का वलिदान दिया, उनका जीवन चरित तथा इतिहास हर स्त्री-पुरुष के हौंसले बुलन्द करेगा और वे आने वाले आन्दोलनों को भी अध्ययन और अनुभव की रोशनी में अच्छी तरह चला सकेंगे। इस इतिहास को लिखने का मेरा यह उद्देश्य विल्कुल नहीं कि भविष्य में भी इसी प्रकार के आन्दोलन सफल हो सकेंगे - मेरा उद्देश्य तो यह है कि शहीदों के वलिदानों और जीवन भर देश ही के कार्य लगे रहने के उनके उदाहरण से प्रेरणा ग्रहण करें और उसका पालन करें, समय आने पर किस ढंग से काम करना है, इसका फैसला काम करने वाले तव की परिस्थिति को देखकर खुद कर सकते हैं।"

प्रसिद्ध बंगाली पत्रकार श्री पी० सी० राय

1863 से एक संदिग्ध राजनेता गुरु रामसिंह 14 जनवरी 1872 की रात को कूका विद्रोह से तत्काल बाद ब्रिटिश शासकों की नजर में 'अत्यंत खतरनाक' व्यक्ति बन गया। उसे स्वतंत्र रहने की अनुमति नहीं दी जा सकती थी ! उसे गिरफ्तार करके बिना मुकदमा चलाये नजरबंद रखा गया और अंत में ब्रिटिश बर्मा में भेज दिया गया ताकि हिंसक गड़बड़ पंजाब में ब्रिटिश सरकार की जड़ें न हिला दें। पंजाब के लेफ्टनेंट गवर्नर ने दिल्ली में अपने कैंप से 16 जनवरी को कलकत्ता के गवर्नर जनरल को तार द्वारा एक गोपनीय संदेश भेजा जो इस प्रकार था :

"पहली घटनाओं को ध्यान में रखते हुए यह उपद्रव बताते हैं कि इस आंदोलन के नेताओं की ला-इलाज षड़यंत्र है। जब तक यह स्वतंत्र घूमते हैं, देश सुरक्षित नहीं है। अतः मैंने फोरस्थि को अधिकार दिया है कि रामसिंह तथा मुख्य सूबों को पकड़ लिया जाये।"

अम्बाला के कमिश्नर टी० डी० फोरस्थि ने आदेश पर अमल करते हुए 17 और 18 जनवरी की रात्रि को एक बजे गुरु रामसिंह को गिरफ्तार किया और उनके दो शिष्यों—लखासिंह तथा जवाहरसिंह सहित तुरन्त दिल्ली भेज दिया। जहाँ से उन्हें सशस्त्र गार्द के पहरे में इलाहाबाद लाया गया और 1818 रेगूलेशन के अधीन इलाहाबाद की जेल में बंद कर दिया गया।

कूका नेता को उसकी गतिविधियों के केन्द्र से दूर ले जाने और इलाहाबाद की जेल में कैद कर देने से आशा की जाती थी कि पंजाब के हालात सामान्य हो जायेंगे।

यह जानना दिलचस्प की बात है कि पंजाब में कूका विद्रोह से उन ब्रिटिश अधिकारियों के दिल में अतंक बैठ गया था जो गड़बड़ वाले स्थान से बहुत दूर

थे। इलाहाबाद के जिला मैजिस्ट्रेट जे० सी० रोवसटन ने, जिसे गुरु रामसिंह की गिरफ्तारी के वारंट मिले थे, सुरक्षा की दृष्ट्रि को ध्यान में रखते हुए इलाहावाद जेल का निरीक्षण किया। सावधानी से निरीक्षण करने पश्चात् वह इसके परिणाम पर पहुँचा कि इस खतरनाक व्यक्ति को इलाहावाद के किला में रखना ही समझदारी की वात होगी। भारत सरकार के सचिव ई० सी० वेले को अपने पत्र में उसने लिखा :

"कल मैंने, जज रिकटोस के साथ जाकर, व्यक्तिगत रूप से जेल का निरीक्षण किया और हम दोनों इस परिणाम पर पहुँचे कि इन व्यक्तियों को ऐसे स्थान पर रखना जहाँ से भाग निकलने की सभी सुविधाएँ मौजूद हैं, समझदारी की वात नहीं होगी। अत: मैंने अगले आदेश तक वंदियों को किला में बंद रखने की जिम्मेदारी अपने ऊपर ली है। यदि मेरी राय ली जाय तो इन्हें किला में नजरवंद रखना मुझे कहीं उपर्युक्त वात दिखाई देती है।"

वास्तव में जेल अधिकारियों को भय था कि गुरु के शिष्यों की ओर से उन्हें नजरवंदी से निकाल ले जाने के प्रयास होंगे। जेल अधिकारियों ने जिला मैजिस्ट्रेट को पहले ही सूचित कर दिया था कि बाहर से आये 200 व्यक्तियों को जेल में घुसने से रोका नहीं जा सकता।

वाद में इलाहावाद के किला को भी कूका गुरु को नजरवंर रखने के लिए मजवूत नहीं समझा गया। इलाहावाद तीर्थ-यात्रियों का केन्द्र था जहाँ रामसिंह के शिष्यों का अधिकारियों की नजर बचाकर जमा हो जाना अपने गुरु के साथ संपर्क स्थापित कर लेना तथा पंजाब में विद्रोही गतिविधियाँ जारी रखने में उनसे रहनुमाई लेना आसान होगा। ऐसी किसी भी सम्भावना को खत्म करने के लिए भारत सरकार ने उन्हें ब्रिटिश वर्मा में भेजने का फैसला किया। निस्संदेह, गवर्नर जनरल इन कौंसिल ने कूका नेता पर मुकदमे तथा रिहाई के सवालों पर विचार किया, मगर कुछ भी उचित नहीं था। पंजाब का गवर्नर जनरल उस समय फौजदारी अदालतों को वताये विना अचानक गिरफ्तारियां करने का अधिकार प्राप्त करने हेतु जिद कर रहा था, क्योंकि उसे सूचनाएँ मिली थीं कि 1872 के अप्रैल महीना में कूके एक और विद्रोह करने का प्रयास करेंगे। ऐसी धमाके वाली स्थिति में गुरु राम सिंह पर मुकदमा नहीं चलाया जा सकता। गवर्नर जनरल इन कौंसिल समझता था कि कि इस बात के पर्याप्त प्रमाण मौजूद हैं कि गुरु रामसिंह को निरंतर नजरबंद रखा जाये। और यह दर्शाने के लिए भी, कि उनकी रिहाई – "देश की शांति के लिए खतरनाक होगी।"

गुरु रामसिंह को मार्च में इलाहाबाद के एक योरोपियन अधिकारी की देख-

रेख में सशस्त्र गार्द के पहरा में रंगून पहुंचाकर, वहां पर सेंट्रल जेल में बंद कर दिया गया। वर्मां के निर्वासिन समय रास्ता में रुकने पर गुरु रामसिंह जी का एक शब्द-चित्र कलकता के दैनिक समाचार पत्र 'इंगिजशमैन' में प्रकाशित हुआ था। 14 मार्च, 1872 को समाचार पत्र में लिखा :

"कूका नेता, रामसिंह सोमवार को सुवह शाही कैदी की हैसियत से कलकत्ता पहुंचा और तुरंत उसे रंगून भेज दिया गया। एक योरोपियन पुलिस अधिकारी और कुछ सिपांहियों के चार्ज में उसे एक नौकर सहित हावड़ा लाया गया। वह छः फुट से अधिक ऊँचाई का व्यक्ति है। वह बहुत वृद्ध लगता है। हमें आशा है, उसकी सार-संभाल की तरफ ध्यान दिया जायेगा।"

सिख इतिहासकार श्री शमशेरसिंह 'अशोक'

पुरुष तो इस संसार में आते ही रहते हैं, मगर युग पुरुष वही होते हैं जो किसी कौम, समाज अथवा देश की दिशा परिवर्तित कर दें। सम्मानीय वावा रामसिंह निश्चय ही ऐसे ही युग पुरुष थे।

नामधारी आंदोलन का प्रारम्भ वावा रामसिंह जी ने कैसे किया? उन्होंने सिख राज (लाहौर) की नौकरी कव और कैसे छोड़ी? इस सम्वद्ध में पंजाव सरकार के कांफीडेन्शल रिकार्ड के अनुसार ऐतिहासिक दृष्टिकोण से जो सच्चाई दृष्टिगत हुई है, वह किसी प्रकार आंख से ओझल नहीं की जा सकती। यह रिकार्ड मैंने सन् 1943 से 1946 तक लाहौर सिख नेशनल कालेज की सर्विस के ससय पंजाब सरकार के रिकार्ड आफिस (मकबरा अनारकली, सिविल सचिवालय) लाहौर में से देखे और उनके नोट लिए थे। महाराजा की मृत्यु के पश्चात् खालसा फौज में जो पतन आ गया था, बाबा रामसिह जो खालसा फौज में थे, यह सब देखकर बहुत दुखी हुए और उन्होंने हथियार फेंककर सिख राज की नौकरी छोड़ दी और भैणी साहव आकर अपना कारोबार करने लगे।

अपने गांव भैणी साहव में आपने बीस वर्ष तक घोर तपस्या करके देश व्यापी नामधारी आंदोलन की नींव रखी थी।

स्व० डा० फौजासिंह

हमारे कुछ विद्वान लेखक अभी तक कूका आंदोलन के संबंध में 'सिंह सभा' द्वारा डाले गए भ्रम से मुक्त नहीं हो पाये और कूका आंदोलन को उसकी उपलब्धियों के आधार पर जो महत्व मिलना चाहिए, वह नहीं दे रहे। यह केवल कूका आंदोलन के साथ ही अन्याय नहीं, वरन् सिख इतिहास के साथ भी अन्याय है।

सिंह सभा आंदोलन के महत्त्व से हम इनकार नहीं कर सकते। सिख कौम पर इसकी अमिट छाप है। मगर इस बात को कभी नहीं भूलना चाहिये कि यह आंदोलन अंग्रेज के समर्थन के साथ शुरु हुआ था और इसमें उनका उद्देश्य सिखों के दिलों से कूका-प्रभाव को दूर करना था। परिणाम स्वरूप कूकों की आलोचना, उनका विरोध हरेक उस सिख के लिये एक प्रकार का फैशन बन गया, जिसे फरंगी सरकार की चापलूसी करना था।

परन्तु इस संबंध में एक अंतर जरूर आ गया है। उन्नीसवीं सदी के अंत में जब सिंह सभा आंदोलन पूरे यौवन पर था तो कूका आंदोलन को अंग्रेज विरोधी सरकार विरोधी और राजनैतिक तौर पर खतरनाक आंदोलन कहकर बदनाम किया जाता था। अब जब समय के साथ अंग्रेज-विरोध को स्वतंत्र्य आंदोलन का उत्तम भाग माने जाने लगा है तो इस आंदोलन के विरोधियों ने यह कहना शुरू कर दिया है कि—"यह तो केवल धार्मिक और समाज सुधार आंदोलन ही था, इसे राजनैतिक आंदोलन कहना भूल है। 1857 के विद्रोह से भयभीत अंग्रेज ने ऐसे ही आकारण कूकों को सरकार विरोधी, राजनैतिक विद्रोही करार दे दिया जो सच्चाई से बहुत दूर है।"

निश्चय ही इन लोगों का न तो पहला दांव ठीक था और न अब वाला दांव ठीक है। ऐतिहासिक खोज के हित में इस समस्या का निर्णय वैज्ञानिक ढंग से किया जाना चाहिये और दिलों में बिठायी गयी भ्रांतियों का निराकरण किया जाना चाहिये।

इस सम्बन्ध में मैं कुछ तथ्य पेश करना चाहता हूं।

1857 में, जब अभी विद्रोह आरम्भ होना था बाबा रामसिंह जी ने जो कार्यक्रम बनाया, उसमें कुछ ऐसी बातें थीं जिनका महत्व केवल मात्र धार्मिक और समाज सुधार से बहुत आगे चला जाता है।

इनमें से मेरे विचारानुसार अव्वल नम्बर पर बावा जी का वह महान पुरुशार्थ था, जो उन्होंने गुरु गोविंदसिंह के खालसा की मर्यादा को पुनः बहाल करने के लिये किया।

बावा जी के कार्यक्रम का एक और अवश्यक अंग चण्डी का पाठ था। चण्डी दी बार गुरुगोविंद सिंह जी की एक ऐसी रचना है जिसके पाठ से शरीर के रोएं-रोएं में वीरता की भावना भर जाती है। इस 'वार' में देवताओं और राक्षसों के युद्ध का वर्णन है। कथा पौराणिक है, परन्तु गुरुजी ने इसका केवल युद्ध से संबंधित भाग ही लिया है। इस रचना का मुख्या उद्देश्य वीरता की भावना पैदा करना था। अतः बावा रामसिंह जी का इस 'वार' के पाठ को अपने समूचे कार्यक्रम में शामिल करना और उसे श्रेष्ठ दर्जा देना यह स्पष्ट करता है कि बावा जी इसके द्वारा वीरता की भावना पैदा करना चाहते थे।

कूका कार्य-क्रम का एक और बड़ा और महत्वपूर्ण भाग गऊ हत्या का विरोध था। इस संबंध में हमारे कई विद्वानों को बहुत भ्रांति हुई है। एक विद्वान ने तो यहाँ तक कह दिया है कि कूकों पर ब्राह्मणों का बहुत प्रभाव था और इसी लिये वह गऊ-हत्या का विरोध करते थे। इससे अधिक झूठ शायद ही कोई हो। बावा रामसिंह का सदा यह प्रयास रहता था कि सिखों को ब्राह्मणों के प्रभाव से बचाया जाये जिस में उन्होंने देवी देवतों मूर्तियों मढ़ी और समाधियोंआदि कीपूजा का सख्त विरोध किया और केवल गुरु वाणी गायन करने और एक निरंकार की उपासना पर बल दिया। इसलिये यह कहना कि वह ब्राह्मणों से प्रभावित थे, सर्वथा बे बुनियाद बात है।

यह स्पष्ट करने के लिए कि कूके गऊ-हत्या का विरोध क्यों करते थे, हमें अपने इतिहास की पृष्ठ भूमि की तरफ जाना पड़ेगा। सिखों के सत्तारूढ़ होने से पूर्व हमारे देश में मुगल शासन था। उस समय गऊ-हत्या पर कोई प्रतिबंध न होने के कारण स्थान-स्थान पर बूचड़ खाने खुले हुये थे। सिख प्रारम्भ से ही इस बात को पसंद नहीं करते थे। मगर जब तक वह सत्ता में नहीं थे तो क्या कर सकते थे? अठारहवीं सदी में जब एक लम्बे संघर्ष के पश्चात सिख मिसलों का शासन स्थापित हुआ तो उन्होंने तत्काल गऊ-हत्य पर प्रतिबन्ध लगादिया। महाराजा रणजीत सिंह ने इस नीति को और भी सुदृढ़ता से जारी रखा। 1808 में जब सर चार्लस मेटकाफ अपनी सरकार का दूत बनकर महाराजा को कसूर में मिला और मित्रता के समझौते के लिये अंग्रेजों की ओर इच्छा प्रकट की तो महाराजा ने तुरन्त अपनी ओर से कुछ धाराएं पेश कर दीं। इनमें एक बड़ी

धारा यह थी कि जब अंग्रेज सेना उसके देश में हो वह पशुओं की हत्या न करे। एक और उदाहरण 1833 को महाराजा और शाह सुजाह के बीच हुई संधि से मिलता है। इस संधि की एक धारा यह थी कि जब शाह सुजाह अपने देश अफगानिस्तान का शासक दुबारा बन जाये तो अपने देश में सिखों की भावनाओं की कद्र करता हुआ पशु वध पर प्रतिबंध लगा दे।

प्रो॰ जसवंत सिंह 'जस'

सन् 1849 में पंजाब को अपने राज में शामिल करने की खुशी मना रहे अंग्रेज को क्या पता था कि जिस राष्ट्रीयता और संस्कृति को वह खत्म करना चाहता है उसे पुनर्जीवित करने के लिये एक महान देशभक्त जन्म लेकर तेतीसवें वर्ष में प्रवेश कर चुका है। यह महान हस्ती बाबा रामसिंह थे जिन्होंने सिख कौम को न केवल अध्यात्मिक और सदाचार के रूप से ऊंचा उठाया बल्कि उसमें देश प्रेम की अग्नि प्रज्वलित कर दी। पंजाब में अंग्रेज के मुकाबला में गुप्त सरकार कायम करनी बाबा रामसिंह जी का एक अद्‌भुत चमत्कार था।

महाराजा रणजीत सिंह के धर्म निरपेक्ष राज के पतन के पश्चात न तो सिखों का कोई संगठन रहा और न ही सिखी वाली कोई बात रही थी। सिख राजनीतिक रूप से अंग्रेज के अधीन होने के कारण साथ-साथ मानसिक रूप से भी पराधीन हो चुके थे और रुढिवादी बन गये थे। गुरुद्वारों और ऐतिहासिक धार्मिक स्थानों पर पाखण्डी और फरेबी पुजारियों का कब्जा हो गया था। महंतों सोढी वेदी और उदाशीन आदि संप्रदायों ने स्थान-स्थान पर अपनी गद्‌दियां स्थापित करली थीं। सिखों में वह सभी बुराईयां प्रवेश कर गयीं थीं जिन्हें सिखों ने बड़े-बड़े बलिदान देकर दूर किया था। कौम के इस पतन को देखते हुये बाबा रामसिंह जी ने सन् 1857 की वैसाखी के दिन मांव भैणी जिला लुधियाना में सिख संगतों को इकट्‌ठा किया और चुने हुये सिखों को अमृतपान करा कर ज्ञानी ज्ञानसिंह लेखक 'पंथ प्रकाश' के शब्दों में निम्न लिखित शिक्षा दी :

"पाप इह हुक्य प्रमेश का विशेष फिर,
राम मृगेश उपदेश देन लागयो।

फैलयो जस भारी सिख थीए ताहि के अपारि,
सिंघ पंथ ब्रिधानों नाम इस पागयो।
हुके छुडवाये,
रखवाये केश मोनियों के,
सुधा छक थीए सिंघ भाग जिन जागयो ·
फीम भंग पोस्त शराव मास चोरी यारी ठगो तज,
थीए संत सतियुग आगयो।

प्रसिद्ध देश भक्त स्व॰ स॰ सोहनसिंह जोश

कूका लहर उस समय वजूद में आयी, जव पंजाव राजनीतिक और सांस्कृतिक तौर पर पतन के गर्त में गिर चुका था। अंग्रेज की राजकीतिक सांस्कृतिक और सैनिक पराधीनता पूरी तरह से स्वीकार कर चुका था और पंजाव की राजाशाही और सामंत शाही ने पंजावी (विशेष कर सिख) जनता को अपने स्वार्थ के लिये, अपने पंजे में पूरी तरह से जकड़ लिया था। सिख अपने महान गुरुओं के उपदेश को भूल चुके थे। अत्याचार और पराधीनता के विरुद्ध लड़ने की वजाय अंग्रेज के रक्षक वन गये थे।

1848-49 में सिख राज खत्म हो गया। अंग्रेज शासकों ने अपनी कुटल नीती से पंजाव पर अपना पूर्ण अधिकार जमा लिया। राज खो गया देखकर और शक्ति की प्रतीक तलवार छिन जाने पर सिख सरदार दिल छोड़कर अपने घरों को चले गये। एक सरदार महाराजसिंह था जिसने अंग्रेज राज की पराधीनता को स्वीकार नहीं किया और अतिम समय समय तक संघर्षरत रहा।

1857 में गदरअर्थात भारत की प्रथम जंग का प्रारम्भ हो गया। सिख राज को गये अभी केवल सात वर्ष ही हुये थे। कंवर दिलीपसिंह को छीनकर ले जाने और रानी जिन्दा के निर्वासन के घाव अभी भरे नहीं थे। अंग्रेज के अत्याचारों की दास्तान अभी ताजा थी। इन अत्याचारों का वदला चुकाने के लिए गदर ने वड़ा अच्छा अवसर प्रदान किया था, मगर इससे लाभ नहीं उठाया गया। नेतृत्व राजाओं और सामंतों के हाथों में था। उन्हें अपने स्वार्थ प्यारे थे, आजादी नहीं।

उन्होंने गदर में शामिल होने की पेश कश को ठुकरा दिया और खुलकर अंग्रेज का साथ दिया। इक्का-दुक्का पंजाबी सेना में विद्रोह हुये, मगर उन्हें निर्दयता से कुचल दिया गया। वह शहीद हो गये।

अंग्रेज शासकों ने अपनी-लिखितों में बार-बार इस बात को दोहराया है कि अगर गदर में पंजाब अंग्रेज का साथ न देता तो अंग्रेज के लिये भारत में कोई स्थान न था। गदर स्थान-स्थान पर सफल हो रहा था। दिल्ली को घेरा जा रहा था। अंग्रेज का राजसिंहासन डोल चुका था। सिखों को मुगलराज के अत्याचारों की दास्तान बताकर और मुसलमानों को सिखों के विरुद्ध भड़काकर राजा महा-राजाओं को अपने हाथ में करके आजादी की इस प्रथम लड़ाई को कुचल दिया गया। और अंग्रेज राज जाते-जाते बच गया।

सन् 1887 के गदर के पश्चात अंग्रेज अधिकारी और अधिक सावधान हो गये। उन्होंने अपने राज को और अधिक सुदृढ़ बनाने के लिये आप आवश्यक साधन जुटा लिये। सेना, पुलिस, नौकरशाही, अदालतों और जेलों का भारत में और जाल बिछा दिया गया।

सी॰ आई॰ डी॰ अर्थात् जासूसी के विभाग को और अधिक मजबूत बताया गया। पंजाब में कर्फ्यु मार्शल ला जैसे कानुन का शासन स्थापित कर दिया गया। नागरिक आजादी खत्म कर दी गयीं। ऊपर से घोषणाए यह की गयीं कि सर-कार किसी के धर्म दखल-अंदाज नहीं करेगी। मगर कूका तथा अन्य राष्ट्रीय आन्दोलनों ने यह प्रमाणित किया कि ऐसी घोषणाओं का अर्थ धर्म दखल-अंदाजी न करना नहीं था, वरन् दखल देना था।

ऐसी ही परिस्थितियों में गुरु रामसिंह जी पंजाब को जगाने और सावधान करने चे लिये अपना संदेश लेकर मैदान में आये। गदर के कुचले जाने के पश्चात् यह पहला आँदोलन था जिसका मुख्य उद्देश्य देश को विदेशी पराधीनता से स्वतंत्र करना था।

स॰ जगजीतसिंह आनंद

सिख राज के खत्म होने के पश्चात और 1857 के गदर की असफलता के

पश्चात भारत में जो प्रथम साम्राज्य विरोधी लहर थी, वह थी नामधारी लहर।

लहर के संस्थापक बालकसिंक जी ने एक विशुद्ध धार्मिक और समाज सुधार लहर के रूप में इसकी नींव सिख राज के अंतिम दिनों में ही रख दी थी। मगर बाद में इसने सत्गुरु रामसिंह जी के नेतृत्व में अंग्रेज राज विरोधी एक लोक लहर का रूप धारण कर लिया।।

यह लहर पंजाव के साधारण किसानों ओर श्रमिकों की लहर थी। सिख राज के पतन और सिख सामंतों की गिरावट से प्रतिक्रम के फलस्वरूप उपजी यह लहर एक आँधी बनकर उठी। उस लहर के नेता सत्गुरु रामसिंह स्वयं खालसा फौज में रह चुके थे।

सत्गुरु रामसिंह प्रथम भारतीय अगुआ थे। जिन्होंने फरंगी राज के साथ असहयोग का नारा लगाया। फरंगी की अदालत में नहीं जाना, उसकी रेल पर नहीं चढ़ना, उसकी डाक व्यवस्था का इस्तेमाल नहीं करना, विदेशी वस्तुओं का वहिष्कार करना, यह आपका उपदेश था। महात्मा गांधी ने पचास वर्ष के बाद जो असहयोग आँदोलन चलाया, उसे सत्गुरु रामसिंह जी ही ने सर्व प्रथम कार्यान्वित किया था।

सख्त अनुशासन और धामिक रीति-रिवाज वाली यह लहर एक शक्ति शाली साम्राज्य विरोधी लहर थी और अंग्रेजो को यह तथ्य पहचानते हुए विलम्ब नहीं लगा। सत्गुरु रामसिंह के अनुयाइयों की संख्या लाखों तक पहुंच चुकी थी। उन्होंने अपने संगठन को पूरी सैनिक क्षमता के साथ बाइस सूबों में बाँट रखा था। उन्होंने अपने अनुयाईयों में सारंगी, अनुसशासन और भाईचारा की जवरदस्त भावना उत्पन्न पैदा कर दी थी।

वी॰ बोगोसलोवसकी (रूस के प्रसिद्ध विद्वान)

नामधारी आंदोलन, जो स्वतंत्र सिख राज्य के समय से ही प्रारम्भ हो चुका था, उपनिवेशक शासकों के विरुद्ध खुले विद्रोह के रूप में परिवर्तित हो चुका था यह बहुत से सोवियत विशेषज्ञों के शोध का विषय बन गया है। स्वर्गीय प्रो॰

अएगुर रेसनर सिख इतिहास के प्रसिद्ध ज्ञाता थे। उन्होंने इस आन्दोलन के विभिन्न पहलुओं पर रौशनी डाली है।

सोवियत विद्वानों के विचारानुसार नामधारी आँदोलन भारत के राष्ट्रीय आन्दोलन की एक महत्वपूर्ण और शानदार घटना है। वह सब इस बात पर एक राय हैं कि अपने शुरू के दौर में यह आंदोलन धार्मिक चौखटे के बाहर नहीं गया, अगर नामधारी आंदोलन अपने दूसरे पड़ाव में एक प्रचण्ड जन आंदोलन बन गया। सामंतशाही की ज्यादतियो और अत्याचारों के कारण उस आंदोलन ने एक नई दिशा ले ली। अपने धार्मिक अनुशासन और लोकतांतरिक सिद्धांतों के कारन, नामधारी, आंदोलन ने ग्रामीण और शहरी-गरीबों के विशाल भागों को अपनी परिधि में ले लिया। इसका प्रचार खालसा फौज के सिपाहियों में बहुत लोक प्रिय हो गया, क्योंकि वे ऊपर की फौजी सामंती जुंडली के भ्रष्टाचार और उनमें फैली बुराईयों से भली भाँति परिचित थे।

प्रो० अब्दुल मजीद खां

"गुरु रामसिंह जी राजनीतिक स्वतंत्रता को धर्म का अंग मानते थे।"

(डा० राजेन्द्र प्रसाद
भारत के प्रथम राष्ट्रपति)

"देश में असहयोग आंदोलन की शुरुआत सबसे प्रथम सत्गुरु रामसिंह जी के नामधारियों में की थी।"

(डा० राजेन्द्र प्रसाद)

"सत्गुरु रामसिंह जी ने आज से पौनी सदी पहले अपनी मातृभूमि को स्वतंत्र करवाने के लिए जो प्रयास किये, उसके महत्त्व से कोई इन्कार नहीं कर सकता।"

(पंडित जवाहर लाल नेहरू)

जब कभी भी आधुनिक भारत की स्वतँत्रता के इतिहास को निरपेक्ष रूप से देखा गया तो एक महान सचाई असत्य की दीवारों को फांदकर उजागर हो उठेगी। यह सचाई स्वतंत्रता संग्राम में जूझने वाले नामधारियों के

नाम स्वर्ण अक्षरों लिखाने वाली प्रमाणित होगी। जब पुनः बाबा रामसिंह जी की महानता का मूल्यांकन किया जायेगा, तब भैणी साहब का नाम देश की आजादी के इतिहास के प्रथम पृष्ठ पर चमकेगा।

कोई डेढ़ शताब्दी पूर्व जब देश विदेशों पराधीनता में पूरी तरह से जकड़ा गया था, तो वसंत पंचमी के शुभ दिन एक गुमनाम गांव भैणी साहब में बाबा रामसिंह जी का जन्म सं० जस्सासिंह रामगढ़िया के घर में हुआ। जवानी में आप महाराजा रणजीतसिंह भी खालसा फौज में भारती हो गये। यह वह समय था जबकि पंजाब में इतिहास पांसा पलट रहा था।

बाबा जी ने सिख राज का पतन अपनीं आंखों से देखा। फिर वह दिन भी आया, जब खालसा फौज पराजित हो गयी और पंजाब भी अंग्रेज के अधीन आ गया। बाबा बालक सिंह जी के साथ हुए मिलाप ने आप के जीवन की धारा ऐसी बदली कि देश की बंजर धरती के लिए भाव अमृतधारा बन गए।

लाला फिरोज चन्द (पूर्व संपादक टाइम्स आफ इन्डिया)

दिल्ली या उन विशाल क्षेत्रों ने, जो अब उत्तर प्रदेश में शामिल है या बिहार के 1857 के गदर में जिन्होंने सक्रिय भाग लिया, उसके साथ पंजाब के भाग का किसी प्रकार भी मुकाबला नहीं किया जा सकता। मगर भली-भांति यह गौरवमय दावा किया जा सकता है कि 1857 के बाद के जमाने में, जबकि राजकीय आंदोलन के इन्डियन नेशनल कांग्रेस (जिसकी स्थापना 1885 में हुई) जैसे मंचों का आस्तित्व नहीं था। इससे पूर्व जिस प्रसिद्ध आंदोलन ने वास्तवरूप से अंग्रेज सरकार को चिंतित कर दिया था, वह आंदोलन पंजाब से उठा था। यह गुरु रामसिंह जी द्वारा चलाया गया नामधारी आंदोलन था। आप के अनुभाई नामधारियों का यह विश्वास है कि सत्गुरु रामसिंह जी गुरुनानक की चलाई हुई गुरु गद्दी के बारहवें उत्तराधिकारी हैं।

1857 के गदर के पश्चात् भारत के स्वतंत्रता संघर्ष को नया रूप दिया, उसमें नामधारियों की, जिन्हें साधारणतः कूके कहा जाता है, गौरवमय स्थान दिया जाना चाहिए। यह अंग्रेज सरकार के विरुद्ध उठ खड़े हुए। यह वह जमाना था, जब अंग्रेज सरकार के पैर जम चुके थे और इसकी सरकार को कोई चुनौती नहीं दी जा सकती थी। यह नामधारी सही अर्थों में स्वतंत्रता संग्राम के संस्थापक हैं। सही अर्थों में स्वतंत्रता सेनानी हैं।

सत्गुरु रामसिंह और आपके नामधारियों ने आधी सदी से पहले ही भविष्य के इतिहास का अनुमान लगा लिया था। 1872 में लुधियाना के डिप्टीकमिश्नर मि० कावन ने मलेर कोटला में कत्लेआम का खूनी काण्ड किया। सत्गुरु राम सिंह जी ने 1860 में ही भविष्य की घटनाओं का अनुमान लगा लिया था, इसी लिए अंग्रेजों के साथ असहयोग का बुनियादी अनुभव गुरुरामसिंह जी को हुआ। उन्होंने अंग्रेज की अदालतों और सरकारी नियंत्रण में चलने वाले स्कूलों के बहिष्कार के आंदोलन की नींव रखी। स्वदेशी आंदोलन के आपही संस्थापक थे।

कूकों ने अंग्रेज के विरुद्ध जो संघर्ष किया और अभूत पूर्व बलिदान किए, उनके सम्बन्ध प्रमाणिक रिकार्ड में से काफी कुछ सामग्री मिल सकती थी, मगर नहीं मिलती। 1872 के कूका विद्रोह का अंग्रेज सरकार ने सख्ती के साथ कुचल दिया। सत्गुरु रामसिंह जी ने जिस कार्यक्रम की बुनियाद रखी, वहीं कार्यक्रम आगे चलकर हमारी राष्ट्रीय नीतियों का मूल आधार बना। यह बात खेद के साथ कही जायेगी कि हमारे इतिहासकारों ने महान नामधारी आंदोलन के महत्त्व को अनुभव ही नहीं किया।

डा० एम० एम० अहलूवालिया

धार्मिक और सामाजिक दृष्टि से भी पंजाब में सिख संप्रदाय पतन और बरबादी के रास्ते पर जा रहा था। ब्राह्मणों का प्रभाव बढ़ता जा रहा था। सिख

जनता और सरदारों में बहुत सी बुराइयां आ गयी थीं। वे उत्सव आदि में फिजूलखर्ची करते थे। तरह तरह के दुराचरण करने लग गए थे। व्यक्तिगत जीवन में छल, कपट, और हिंसा का सहारा लेने लगे थे। इसके अतिरिक्त सिख संप्रदाय में सही प्रथा, लड़कियों को वेचने और उन्हें मारने आदि की बुराइयां आ गयी थीं। इसके अलावा अंग्रेजी राज्य स्थापित हो जाने दूसरे प्रान्तों की तरह पंजाब में भी सवसे बड़ी समस्या ईसाई मत ने पैदा की। गुरुओं के देश पंजाब में नये-नये गिरजाघर वनने लगे। पादरियों के लिए कैदखानों के दरवाजे खोल दिये गये, ताकि वे वहां आकर कैदियों को इसाई बन जाने के लिए फुसला सकें। जो सरकारी नौकर अपना धर्म छोड़कर ईसाई बन जाते थे। उनका रुतवा बढ़ा दिया जाता था। यहां तक कि उन्होंने नन्हें राजकुमार दलीपसिंह को भी तरह-तरह के हथकंडे इस्तेमाल करके ईसाई वना लिया था। सम्पति के सामाजिक नियमों में हेर-फेर किए जा रहे थे ताकि भारत वर्ष में ईसाई मत अधिक से अधिक पनप और फैल सके। हरिमन्दर साहव जी पवित्रता को भारी खतरा पैदा हो गया था और ईसाई सरकार ने ऐसे कानून बना दिए थे कि पवित्र नगर अमृतसर में खुलेआम गोमांस बिकने लगा था।

इन राजनीतिक तथा धार्मिक परिस्थितियों में कूका अथवा नामधारी साम्प्रदाय का अभ्युदय हुआ। इस साम्प्रदाय का उद्देश्य था—निराशा के अन्धकार को दूर करके सामाजिक कुरीतियों को दूर करना, फैल रहे पश्चिमी साम्राज्यवाद का सामना करना और परस्पर धार्मिक पवित्रता व भाईचारे की भावनाओं को पैदा करना।

गुरु रामसिंह अपने रास्ते में आने वाली मुसीवतों और खतरों को भलीभांति समझते थे। उनके देखते-देखते नैतिकता से गिरे हुए लोगों ने लाहौर के आजाद राज्य को धूल में मिला दिया था। वे यह भी देख और समझ चुके थे कि विदेशियों का संपर्क कितना पापपूर्ण और खतरनाक हो सकता है। इसी विदेशी संपर्क में तेजसिंह और लालसिंह जैसे पतित लोगों को गद्दार और विश्वासघाती बना दिया था। गुरु रामसिंह स्वतंत्रता संग्राम को अपने धर्म का अभिन्न और महत्त्वपूर्ण अंग समझते थे। वे यह समझते थे कि सामाजिक और राजनीतिक सुधारों के विना आजादी की लड़ाई में जीत सकना सम्भव नहीं है। यही कारण है कि उन्होंने एक ओर तो अपने शिष्यों को गुरुनानक और गुरुगोविंद सिंह के आदर्शों की शिक्षा दी और दूसरी ओर अंग्रेजों के खिलाफ स्वदेशी और असहयोग का प्रचार किया।

सन् 1870-71 में यह महसूस होने लगा था कि शीघ्र ही नामधारियों और अंग्रेज सरकार की टक्कर होने वाली है। इन्हीं परिस्थितियों में सन् 1872 में ऐसी घटनाएं घटित हुई कि इस वर्षों को नामधारियों के इतिहास में सर्वाधिक घटनापूर्ण वर्ष माना जाता है। पंजाब में गो-वध के लिए बूचड़खाने खुलने के सवाल ने अंग्रेजों के साथ नामधारियों को संघर्ष करने का अवसर भी दे दिया।

सत्गुरु प्रतापसिंह जी को पुष्पांजलि

पत्रकार-लेखक संत इन्द्रसिंह चक्रवर्ती

1890 को पूज्य माता जीवन कौर की गोद में एक महान आत्मा अवतरित हुई। उन्होंने देश की आजादी में पूर्ण योगदान दिया था। उन्होंने कई राजनीतिक सम्मेलन करके अंग्रेज को भारत से निकल जाने पर बाध्य किया था। उन्होंने अंग्रेज सरकार की नजर में कई अपराधी राज नेताओं को पैसे से सहायता की।

सन 1929 में लाहौर, कांग्रेस अधिवेशन पर उसकी सफलता के लिये पंडित जवाहर लाल नेहरू के जलूस में पांच सौ घोड़े और नेहरु जी के लिये अपनी सवारी का घोड़ा भेजकरयोदगान दिया था। जब बाबा खड़कसिंह के नेतृत्व में अकालियों ने कांग्रेस का वहिष्कार कर दिया था तो आपने कांग्रेस नगर में बाहर से आये प्रतिनिधियों के लिये माता जीवन कौर के नेतृत्व में, बड़े स्तर पर लंगर की व्यवस्था की थी जिसकी सभी ने प्रशंशा की थी।

रतनसिंह बब्बर अकालीं, जिसकी गिरफ्तारी के लिए पंजाब के गवर्नर से लेकर आई० जी० पी० तक पूरी तरह से पीछा कर रहे थे और रतनसिंह की गिरफ्तरी के लिये हजारों रुपये का पुरस्कार रखा हुआ था, वह भैणी साहब आया। पीछे-पीछे पुलिस और फौज आ रही थी, मगर तब तक रतनसिंह बब्बर भोजन करके टेडेवाल गाँव के मार्ग से सुतलज दरिया पार के दोआबा में पहुंच चुका था। जब इस बात की पंजाब के गवर्नर को सूचना मिली तो वह रेस-कोर्स के मैदान में सतगुरु प्रतापसिंह जी से मिलकर कहने लगा—

"आपको पता था कि रतनसिंह बब्बर हमारा शत्रु और राजनीतिक हत्यारा और डाकू है, फिर भी आपने उसे खाना खिलाया और शरण दी ! आप जानते हैं, इसका परिणाम क्या हो सकता है ?"

सत्‌गुरु प्रतापसिंह जी ने निर्भीक होकर कहा—"यह स्वतंत्रता का विगुल वजाने वाले सत्‌गुरु रामसिंह जी का लंगर है, इसके द्वार पर जो कोई भी आ जाये वह अपना हो या पराया, मित्र हो या शत्रु, डाकू हो या साधू, बूचड़ हो अथवा वैश्नव, वह भूखा नहीं जा सकता। इसके लिये जो भी दण्ड हमें मिले हम हंसकर उसे स्वीकार करेंगे !"

यह जवाब सुनकर गवर्नर दुखी तो बहुत हुआ, मगर कुछ कर नहीं सका।

एक और घटना बड़ी मजेदार है। वह यह कि जब पंडित जवाहर लाल नेहरू भैणी साहब पधारे थे तो उनका शानदार स्वागत किया गया था। जिसके चित्र और समाचार सभी भारतीय समाचार पत्रों में प्रकाशित हुए थे। फरीद-कोट के महाराजा हरिदरसिंह के साथ सत्‌गुरु प्रतापसिंह जी का वहुत मेल-मिलाप था। एक वार जब आप फरीदकोट पधारे, बात ही वात में महाराजा ने कह दिया—"आप हमरे साथ प्रेम मुहब्बत रखो या फिर जवाहर लाल के साथ। दोनों में एक चुनाव कर लीजिये ।"

यह सुनकर सत्‌गुरु जी मुस्कराये और बोले "महाराज, आपके साथ हमारा साधारण मेल मिलाप है और पंडित नेहरू के साथ असाधारण।"

एक प्रश्न, जो सौ सवा सौ साल से हमें किया जाता है कि देश को 'कूकों' ने क्या दिया है। क्या वह नहीं जानता कि बिलासिता और पराधीनता में पागल दिल 'देश पूजा' की भावना से भर दिया गया ? वायसराय से लेकर साधारण सिपाही तक 'कूका' शब्द से क्यों कांपता था ? वह कौन सा महान आदर्श था जो उन्होंने देश के सामने रखा था।

देश पूजा, देश प्रेम उनके रोम-रोम में समाया हुआ था। वह धर्म, नैतिकता सच्चाई और भाईचारे से रहित देश भक्ति के सख्त विरोधी थे वह ऐसी हरेक योजना के प्रवल समर्थक थे, जिसमें आत्मबल बढ़े। जिसमें मानवता को सर्वोपरि रखा जाये।

सत्‌गुरु प्रतापसिंह जी अपने पंथ की सामाजिक व्यवस्था, कलाकौशल संघ की सद्‌भावना चाहने को हमेशा आदेश दिया करते थे कि भले ही आप बहुत ज्यादा व्यस्त हों, भजन वाणी, नाम सिमरन आदि नामधारियों के बुनियादी असूलों पर नहीं चलता, तो वह हमारे प्यार का अधिकारी नहीं हैं। हम हरेक

नामधारी से यह आशा करते हैं कि वह देश भक्त, अहिंसा का अनुयाई और सच्चे मार्ग पर चलने वाला हो।

पत्रकार, लेखक, महाकवि अवतार सिंह आजाद

आज से लगभग 40 वर्ष पूर्व जव मैं भरी जवानी में था तो पहली बारसतगुरु प्रतापसिंह जी के दर्शन किये थे। नामधारी धर्मशाला अमृतसर में दरबार सजा हुआ था। उस समय के सभी नामधारी महापुरुष उस दरबार में सुशोभित थे अदभुत और अमोल गुरुवाणी का कीर्तन हो रहा था। मुझे उन्होंने अपने पास ही बैठने को कहा।

कीर्तन मैंने पहले भी सुना था और सिखों के प्रसिद्ध संगीतकारों को सुन चुका था, मगर जो अद्वितीय आनन्द इस संगीत का था, उसे मैं वर्णन नहीं कर सकता। हजूर ने मेरा कुशल मंगल पूछा। फिर जव उन्हें पता चला कि मैं बेरोजगार भीं हूँ तो उन्होंने मेरी आशा के उलट मेरी सभी घरेलू आवश्यकतों का प्रवंध कर दिया।

सत्गुरु प्रतापसिंह जी के साथ यह मेरा प्रथम मिलन था। तत्पश्चात् तो उन्होंने मुझे हमेशा के लिए अपना बना लिया।

1934 में जब गुरु नानक सर्व सम्प्रदाय सम्मेलन की तैयारी आरम्भ की गयी, तो तैयारी के सम्बन्ध में जिस प्रतिनिधि मण्डल ने पंजाब भर का दौरा किया था, उसमें मैं भी शामिल था प्रतिनिधि मण्डल के अन्य सदस्य थे—स० आत्मासिंह रावलपिण्डी, प्रोफेसर गंगासिंह, संत निधान सिंह आलिम तथा संत इन्द्रसिंह चक्रवती आदि। यह भव्य सम्मेलन सिखों के सभी मतों तथा पार्टियों की एकता के लिए आयोजित किया गया था। सम्मेलन बहुत सफल रहा इस सम्मेलन में मास्टर तारा सिंह, प्रिंसीपल जोधसिंह, ज्ञानी शेरसिंह, भाई कान्ह सिंह नाभा तथा सिखों की अन्य हस्थियों मे भाग लिया। सम्मेलन की अध्यक्षता भाई साहव भाई अर्जुनसिंह बागड़ियां ने की थी।

एक बार मैं कलकत्ता की यात्रा पर थी कि मुझे संत हजूरसिंह भूरीवाले द्वारा सतगुरु प्रतापसिंह जी का संदेश प्राप्त हुआ कि मुझे उनके साप्ताहिक पत्र 'सतयुग' के बसंत अंक का संपादन करना है। मैं कलकत्ता से वापस आकर अपने

काम में लग गया। सत्गुरु जी दौरे से वापस आये और मुझे देखकर प्रसन्न हुये 'सतियुग' का बसंत अंक बड़ी शान के साथ प्रकाशित हुआ, मगर अंग्रेज सरकार ने उलटा ही उसे जब्त कर लिया। उसके पश्चात् भी मैं काफी अर्सा पहले अमृतसर और फिर लाहौर से 'सतियुग' का संपादन करता रहा यही नहीं, उसके बाद भी जीवन भर मेरा उनके साथ संपर्क बना रहा और हमेशा मुझ पर कृपा-दृष्टि बनी रही।

डा० राजेन्द्र प्रसाद

सत्गुरु प्रतापसिंह जी के सदोपदेशों और जीवन से अनगिनत व्यक्तियों ने सदाचार और भक्ति की प्रेरणा ली है। आपने और आपके अनुयायियों ने समाज सुधार, ग्राम विकास और विशेष करके गो-उन्नत्ति के क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य किया है। मुझे आशा है कि सत्गुरु प्रतापसिंह जी की पावन स्मृति इस दिशा में आपके सेवकों और प्रशंसकों के लिए सदैव प्रेरणा स्रोत बनी रहेगी।

श्रीमती इन्दिरा गांधी

सत्गुरु प्रतापसिंह जी न केवल महान आध्यात्मिक गुरु ही थे बल्कि स्वतंत्रता संग्राम के महान सेनानी भी थे। समाज सेवा के क्षेत्र में आपका योगदान अभूतपूर्व हैं। मैं आपकी स्मृति में अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करना अपना परम कर्तव्य समझती हूँ।

श्री गुलजारीलाल नन्दा

मैं सत्गुरु प्रतापसिंह जी की स्मृति में अपनी भावभीनी श्रृद्धांजलि अर्पित करता हूँ। वह उस पंथ के शिरोमणि थे जिसकी वीरता और सेवा की महान परम्पराएं कायम हैं वह अपने जीवन में राष्ट्रीय सेवा तथा आर्थिक समाज सुधार के प्रतीक थे। सत्गुरु जी के साथ मुझे व्यक्तिगत संपर्क का गौरव प्राप्त हैं। मैं आपकी गतिविधियों को बड़े सम्मान के साथ स्मरण करता हूँ। और आशा करता हूँ आप जो महान कार्य प्रारम्भ कर गये, आपके अनुयाई उन्हें और आगे बढ़ायेंगे।

श्री जगजीवन राम

श्री सत्गुरु प्रतापसिंह जी के एक समाज और धार्मिक सुधारक होते हुए भी आपके मन में देश के प्रति गहरी दिलचस्पी थी। आपके सतत कार्य और शिक्षाएं न केवल आपके सिखों बल्कि सभी सच्चाई के खोजियों को उत्साह प्रदान करती रहेंगी।

लाला जगत नारायण

मैं महाराज प्रतापसिंह जी से प्रथम बार लाहौर में मिला था। मैं जानता हूँ कि आपने कांग्रेस के लिये क्या कुछ किया। वह देश का भविष्य कांग्रेस में देखते थे। जब मैं भी कांग्रेस से प्रथक हो गया, तो भी मुझे आपका प्रेम प्राप्त होता रहा। वह प्राणी मात्र से प्रेम करने वाली एक महान विभूति थे।

स० सवरन सिंह

बाबा प्रताप सिंह एक आर्कषिक व्यक्तित्व के मालक थे। आपका प्रेम, देश कौम और जन साधारण के लिये होने के कारण प्रत्येक को अनायास अपनी ओर खींचता था। नामधारी सम्प्रदाय का जन्म ही बलिदानों से हुआ था। जिस बलिदान का सबूत बाबा रामसिंह जी ने दिया, वह अन्यथा कहीं नहीं मिलता। ब्रटिश राज की चट्टान के साथ टक्कर लेकर आपने भारतीयों को जगा दिया जिस कार्य को आपने प्रारम्भ किया, सत्गुरु बावा प्रतापसिंह ने उसका परिणाम स्वयं देखा, देश स्वतंत्र हो गया।

मुझे आपके दर्शनों का अनेक वार सौभाग्य प्राप्त हुआ था। प्रेम की भावनाओं को उजागर करके आपने पुरानी परम्पराओं को कायम रखा।

स० ज्ञानसिंह राड़ेवाला

मैं महसूस करता हूँ कि सिख पंथ में से नाम सिमरन लोप हो रहा है। गुरु नानक देव जी की यही देन थी। बावा रामसिंह जी ने नाम वाणी की परम्परागत रीति को न केवल जारी रखा बल्कि आगे बढ़ाया। नाम लेने से हमारे चरित्र का निर्माण होता है। पंडित जवाहर लाल नेहरु ने कहा कि आज के युग में सबसे बड़ा संकट चरित्र का ही है। नाम वाणी वह शक्ति है जो बलिदान की भावना को जागृत करती है। इतिहास साक्षी हैं जो हंस-हंस कर शहीद हुए। वे नाम वाणी के रसिया ही थे मुझे महाराज प्रतापसिह जी के चरणों में बैठने का अवसर मिला है और मैं आज आपकी कमी को बुरी तरह से महसूस यरता हूँ।

श्री नवाब सिंह चौहान

समस्त भारत देश को इस बात का गर्व होना चाहिये कि हमारे देश में गुरु प्रतापसिंह जी जैसे देशभक्त, गरीबों के सहायक हो चुके हैं जिन्होंने देश की आजादी के लिये बड़े कष्ट झेलकर स्वतंत्रता की पताका को झुकने नहीं दिया। इसके अतिरिक्त आपमें धार्मिक सहिष्णुता भी बहुत थी। आपका उद्देश्य था, प्रेम, वाणी का प्रचार तथा शरीर व आत्मा की आजादी।

मा० तारासिंह

मैं इतना ही कहना चाहूंगा कि 1914 ई० में बाबा प्रतापसिंह जी के साथ मेरी प्रथमभेंट हुई जबकि सरकार ने गुरुद्वारा रकाबगंज की दीवारको गिरा-कर सिखों की आन को चुनोंती दी थी। आपके साथ सारी बातचीत हुई और आपने सिखों को व धार्मिक भावनाओं को आहत करने वाली अंग्रेज सरकार की कारवाही के विरोध में पूर्ण सहयोग का आश्वासन दिया था।

स० अमरसिंह दुसांझ

संसार में तीन प्रकार के पुरुष आते हैं एक वे, जो अपने लिये जीते हैं। दूसरे जो दूसरों के लिये भी। बाबा प्रतापसिंह जी उनमें से थे जो केबल मनुष्यता, परोपकार और दूसरों के लिये जीते हैं। महापुरुष अमर हैं। गुरुवाणी का फर्मान हैं।

"मैं न मरयो मरिबे संसार'

महाराज जी के विचार आज भी हमारे बीच जीवित हैं। महाराज बाबा प्रतापसिंह जी का व्यक्तित्व प्रभावशाली था। वह हंसमुख, अमीर गरीब के साथ समान व्यवहार करने वाले और संगत की सेवा करने वाले थे।

आप इसलिये भी प्रातः स्मरणीय हों कि बाबा रामसिंह जी के उत्तराधिकारी

थे। जिस प्रकार 72 के लगभग नामधारी शहीदी का जाम पी गये, वह तब तक स्मरणी रहेंगे, जब तक चाँद सूर्य हैं।

इतिहास गवाह है कि बाबा रामसिंह जी ने रूस और अफ़गानिस्तान में अपने दूत बाबा गुरुचरण सिंह आदि को भेजकर दूसरे देशों से संपर्क कायम किया ताकि भारत में से विदेशी साम्राज्य वादियों को उखाड़ा जा सके इतिहास बोलता है कि भैणी साहब देश भक्ति के विश्वविद्यालय का दर्जा रखता है।

निर्मले महँत हाकमसिंह

महाराज प्रतापसिंह जैसे महापुरुष संसार में कभी-कभी ही आते हैं। परम पूज्य महाराज प्रतापासिंह जी को सभी गुणों के भरपूर खजाने दिये थे। आपकी उत्कट अभिलाषा थी कि सभी सिख सम्प्रदायों की एकता कायम रहे। महा पुरुषों के चरित्र ऊँचे होते हैं। और उनसे सदैव प्रेरणा मिलती रहती है।

कामरेड सोहनसिंह जोश

मैं भी उन लोगों में शामिल हूं जिन्हें महाराज जी को बार-बार मिलने का अवसर मिलता रहा है। अनेक बार लाहौर में, और फिर देश विभाजन के पश्चात् इधर भी कई बार दर्शन किये और विचारों का आदान प्रदान किया। कूका आंदोलन का प्रारम्भ अंग्रेजी साम्राज्यवाद के विरुद्ध विद्रोह से हुआ और महाराज प्रतापसिंह जी ने 1926-27 ई० में सामूहिक रूप से पंथ को अंग्रेज विरोधी आदोलन में सक्रिय करने के लिये कांग्रेस का सहयोगी बना दिया मैंने अनेक बार महाराज जी को निर्भीकता, स्पष्टवादिता और देश भक्ति की भावना से प्रभावित हुआ हूं। जैसे अत्याचार के विरुद्ध महाराज प्रतापसिंह जी के दिल में घृणा थी और वह अपने साथियों के साथ आजादी के संघर्ष में जूझते रहे, यह भुलाने वाली बात नहीं है। वे किसी के आगे झुके नहीं।

पहली बात महाराज प्रतापसिंह जी अत्याचार के आगे कभी सिर नहीं

झुकाया। पुलिस चौकियों का मुकाबला करते हुये आप सुदृढ़ अडिग रहे। दूसरी बात, आपने जो एकता की परम्परा चलाई, उसे हमें आगे बढ़ाना होगा हमें यह नहीं भूलना चाहिये कि हमें महाराज जी की हिन्दू सिख, मुसलमान एकता को कायम रखना है।

ज्ञानी करतार सिंह

महाराज प्रतापसिंह जी में बहुत से गुण थे। वह पशु पालक थे। घोड़ों और गऊओं की उन्नति के लिये सदैव प्रयत्नशील रहे। यह आपकी पंजाब के लिये महान देन है। इस क्षेत्र में यदि किसी के परिश्रम को देखा जाये तो महाराज जी पर ही दृष्टि जाती है। गाय का 15 किलो दूध हमारे देश में बहुत माना जाता है, मगर यूरोपीय देशों में 40-45 किलों दूध देने वाली गऊएँ आम हैं। उस स्तर पर पहुँचने के लिए महाराज प्रयत्नशील रहे हैं। भैणी साहब में एक गाय ऐसी भी थी, जो 75 पौंड दूध देती रही है।

दूसरा एक कार्य और है जिसे महाराज जी ने अपने हाथ में लिया। सिख गुरुओं ने गुरुवाणी रागों में उच्चारण की है। पहले सिखों में यह परम्परा कायम थी—कि जिस राग मैं वाणी रची गयी है, उसी में गायी जाये मगर अब यह सब नहीं हो रहा। महाराज प्रताप सिंह जी ने इस परम्परा की पुनः स्थापना के लिये बहुत प्रयत्न किये। तीसरा कार्य आपने और किया। विवाह शादियों की रस्में और फजूल खर्च कम करने की बातें तो लोग करते रहे हैं। मगर भरे मेलों में विवाह की परम्परा कायम करना यह महाराज जी की ही एक विशेषता थी।

चौथी चीज है सहिष्णुता। महाराज प्रतापसिंह जी ने भैणी साहब में सभी सम्प्रदायों का सम्मेलन आयोजित किया और सभी सिख सम्प्रदाओं के नेताओं को एक मंच पर लाकर बैठा दिया।

धर्म और देश की भलाई का जो प्रचार महाराज जी ने किया है, वह आसाधारण है। देश भक्ति, हिन्दू सिख एकता, गुण वाणी का प्रचार और सिखों की एकता इसी घर की देन है।

का० हरिकिशन सिंह सुरजीत

नामधारी पंथ ने सत्गुरु रामसिंह जी के नेतृत्व में देश को उस समय झकझोरा, जब अंग्रेज का पंजा देश पर पूरी तरह से जम चुका था। देश की आजादी में जो नामधारियों का योगदान रहा, मैं उससे बहुत प्रभाबित हुआ हूँ। महाराज प्रतापसिंह उस समय गुरु गद्दी पर विराजमान थे, जब अंग्रेज के अत्याचार पंजाव पर चरम सीमा पर थे। और महाराज जी ने जिस योग्यता, साहस और दूरंदेशी से पंथ और पंजाव का नेतृत्व किया, उसे बयान् नहीं किया जा सकता हिन्दू, सिख, मुस्लिम एकता का ही सवाल क्या, उन्होंने मनुष्यता की भलाई का संदेश दिया। यह महाराजा की भारत की जनता को भारी देन है। आपका शांति के लिए प्रेम, मनुष्यमात्र प्रति स्नेह ऐसी विशेषताएं हैं, जिनसे बहुत कुछ सीखने की आवश्यकता है।

मैंने स्वयं देश की आजादी के लिए जवानी के अधिकतर दिन जेलों और भूमिगत रहते हुये बिताये हैं। मुझे महाराज प्रतापसिंह जी को निकट से देखने का अवसर 1945 ई० में मिला जब पजाव में चुनात्र होने वाले थे। मैं और का० सोहनसिंह जोश आपसे मिलने श्री भैणी साहब गये। वहां खुलकर राजनीतिक स्थिति पर विचारों का आदान-प्रदान हुआ। आपने बड़ी स्पष्टवादिता से काम लिया और कहा कि आपको देश की आजादी के लिये लड़ रही किसी एक पार्टी से लगाव नहीं है। वह तो सभी देश भक्तों के शुभ चिंतक हैं। आपकी ख्वाहिश हैं कि सभी देश भक्त पार्टियाँ एक होकर चुनाव लड़ें। अगर ऐसा नहीं होता तो वह हरेक उस उम्मीदवार की सहायता करेंगे जिसने देश के लिये सबसे अधिक कुर्बानी दी हैं। भले ही वह किसी पार्टी से संम्बंध रखता हो।

महाराज प्रतापसिंह का सिर्फ कांग्रेस से प्रेम नहीं था, वल्कि वह हरेक देशभक्त की कद्र करते थे। वह पूर्ण शांतमय के समर्थक थे, मगर वह अन्य क्रांतिकारियों के भी कद्रदान थे।

भीमसेन सच्चर

महाराजा प्रतापसिंह जी हर तरह से एक प्रकाश स्तम्भ थे; इस बात का गर्व न केवल आपके सिखों को है, बल्कि लाखों अन्य को भी, जो आजादी के संग्राम में कंधे से कंधा मिलाकर लड़े।

आपका परमात्मा में अगाध विश्वास, सादगी, मनुष्यता तथा सहानुभूति, भक्ति, जिनके लिये आपका जीवन समर्पित था, हमारे लिये एक बहु मूल्य निधि है।

